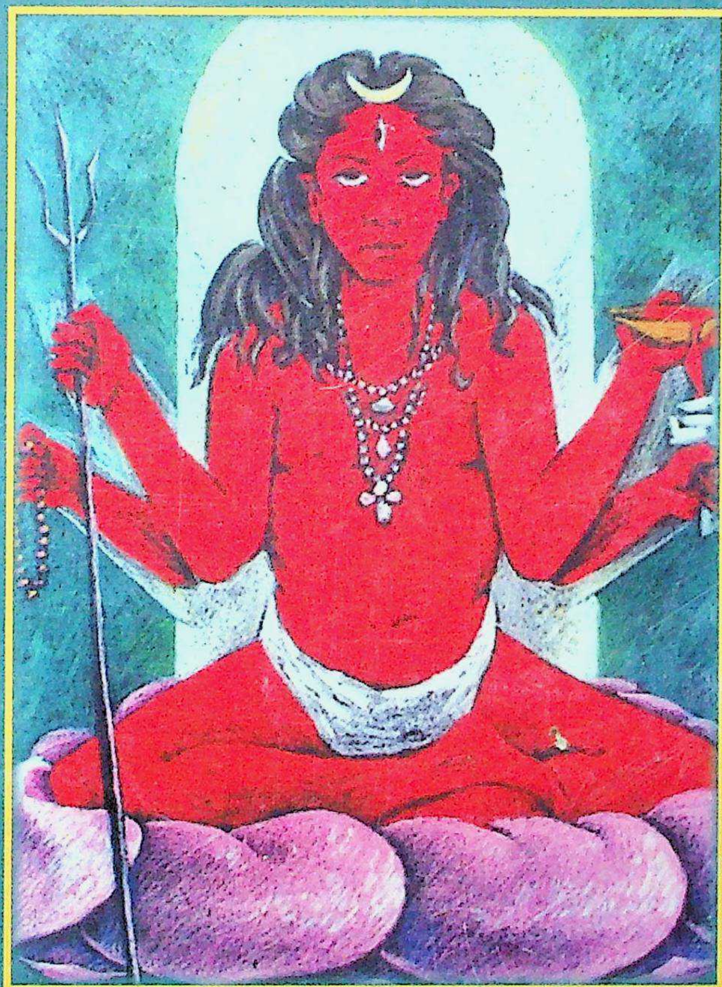
मिथक नन्दिकेश्वर



अग्निशेखर

मिथक नन्दिकेश्वर

प्रसिद्ध कश्मीरी एवं हिंदी
साहित्यकार, चिंतक, समालोचक
श्री रतनलाल शांत को
सस्नेह

अग्निशेखर
29/5/04

अग्निशेखर

शारदापीठ प्रकाशन
जम्मू

नोट : इस पुस्तक की बिक्री से आनेवाली धनराशि श्री नन्दिकेश्वर अस्थापन, (वितस्ता एन्कलेव, उदयवाला - बोह्ड़ी, जम्मू में निर्माणाधीन) के लिए समर्पित है - लेखक ।

प्रथम संस्करण : 2004
मूल्य : 50-00

पुस्तक मिलने का पता :

डॉ. बिहारी लाल रैणा
सचिव, नन्दिकेश्वर महाराज ट्रस्ट
32-सी, ओमनगर, उदयवाला, बोह्ड़ी,
जम्मू - 180002
फोन - 0191-2504611

आवरण : पं. त्रिलोक कौल

शारदापीठ प्रकाशन, बी-90/12, भवानीनगर, जानीपुर, जम्मू-180007 द्वारा प्रकाशित/टाईपसेटिंग श्रीकृष्ण कम्पयूटर्स, सरवाल जम्मू द्वारा एडइफैक्टस, दिल्ली में मुद्रित।

आभार

इस पुस्तक के लिखने में जिन सन्दर्भ-ग्रन्थों की सामग्री का उपयोग हुआ है, मैं उनके ग्रन्थकारों का ऋणी हूं।

इस पुस्तक में सुप्रसिद्ध चित्रकार पं. त्रिलोक कौल के बनाये नन्दिकेश्वर भैरव का चित्र मुखपृष्ठ पर मैंने प्रस्तुत किया है, इसके लिए उनका आभार।

मैं भारतीय ललित कलाओं के अधिकारी विद्वान तथा इन्स्टिट्यूट ऑफ फाइन आर्ट्स (जम्मू) के विभागाध्यक्ष प्रो. ललित गुप्ता का भी शुक्रगुज़ार हूं जिन्होंने श्री नथु बटेडी के मूर्ति शिल्प नन्दि का चित्र उपलब्ध कराया। इसके अतिरिक्त उन्होंने उत्तर बैहनी (पुरमंडल) के अद्भुत नन्दि का चित्र भी उपलब्ध कराया।

इस पुस्तक के लिए जिन मित्रों ने नन्दिकेश्वर से सम्बंधित लोगों के अनुभव और संस्मरण जुटाये मैं उनका भी धन्यवादी हूं। ये अनुभव-संसार इस पुस्तक में 'कथाजपम' शीर्षक के अन्तर्गत प्रस्तुत किया गया है।

मैं अपनी श्रद्धेया मां अम्माजी का भी कृतज्ञ हूं जो दो वर्ष पूर्व सालभर मेरे पीछे लगी रहीं कि मैं यह पुस्तक लिख डालूं। वह नन्दिकेश्वर भैरव की अनन्य भक्त हैं।

इस पुस्तक के लेखन के दौरान यथासमय सलाह, सहायता और प्रोत्साहन देने के लिए मैं अपनी पत्नी डॉ. क्षमा कौल का भी आभारी हूं।

– अग्निशेखर
17-4-2004

अनुक्रम

पृष्ठ

नन्दिकेश्वर और भैरव-परंपरा

इस पुस्तक लिखने के पीछे कई संयोग और स्मृतियां छिपी हुई हैं। कश्मीर में मेरे पैतृक गांव सुंबल के अधिष्ठता भैरव नन्दिकेश्वर हैं, इसलिए हमारे कुल के ईष्ट हैं। मेरे ननिहाल गोशबुग गांव में भी नन्दिकेश्वर का तीर्थ है और मेरी पत्नी के मायके सीर गांव में भी नन्दिकेश्वर भैरव का प्रसिद्ध तीर्थ स्थान है। ये तीनों गांव बारामुल्ला ज़िले के अन्तर्गत पड़ते हैं। घर, ननिहाल और ससुराल-तीनों क्षितिजों पर नन्दिकेश्वर भैरव विराजमान हैं। इसलिए जब से होश संभाला है, मैं इस भैरव से जुड़ी कथाएं, परंपरायें, रीति-रिवाज, मिथक, लीला-कविताएं सुनता आया हूं। नन्दिकेश्वर भैरव के चमत्कारों की इतनी कहानियां सुनने को मिलती हैं कि एक मोटी पुस्तक बन जाए।

यह नन्दिकेश्वर भैरव कौन हैं, इनका इतिहास, इनका महात्म्य क्या है, यह शिव हैं, या रुद्र हैं या वृशरूप नन्दी हैं जो महादेव के वाहन के रूप में जाने जाते हैं, इस तरह के अन्य अनेक प्रश्न हमेशा से मेरे मन में उठते रहे हैं। कॉलिज के वर्शों में, जब मुझ पर जोगियों, संन्यासियों, पीरों-फकीरों और गूढ़ महात्माओं की संगत में रहने का जुनून सवार था और मैं सामाजिक दृष्टि से मर्यादित परिव्राजक सा जीवन जीने लगा था, एक बार मन बना लिया था कि मैं नन्दिकेश्वर के मिथक के बारे में कुछ लिखूंगा। परंतु कभी लिख न सका।

हर वर्ष ज्येष्ठ अमावास्या पर मन में सुगबुगाहट होती। इस दिन कश्मीर में सुंबल, गोशबुग, सीर के अलावा वनपुह (अनन्तनाग), कुपवारा ज़िले के अन्तर्गत विलगाम, गोट्यूंग और बातरगाम में मेले लगते। नन्दिकेश्वर भैरव का जन्मदिन मनाया जाता। सैंकडों की संख्या में आस्थावान जनता दर्शनों के लिए इन स्थानों की ओर उमड़ पड़ती। हाट-बाज़ार सजते, खिलौने वालों, लूचियां- नदुर मोंजियां, पकौड़े बनाने वाले हलवाइयों की कतारें, गुब्बारे वालों की चिल्ल-पौं और सबसे ज़्यादा दिव्य रौनक उत्साह से भरे बच्चों और रंग-बिरंगी चूडियां खरीदती बच्चियों की होती।

और इन तीर्थों के भीतरी परिसर में एक अलग ही आध्यात्मिक आभा होती । चिनारों के नीचे भजन-कीर्तन गाने वाली मंडलियां, किसी न किसी संत महात्मा की मौजूदगी, यज्ञशाला से आती लयबद्ध मंत्रों की ध्वनियां, कतारों में प्रसाद खाते लोग। दाल, चावल, साग और कड़म का कलिया सोचकर मुंह में पानी आता है। और दूसरे दिन... कुशल-होम.. अर्थात् तहरी और कलेजी का सामिश प्रसाद ।

नन्दिकेश्वर भैरव के तीर्थ पर, अन्य भैरवों की तरह ही, सामिश भोग चढ़ता है । ऐसी परंपरा है । पीले चावल, जिसे कश्मीरी में तहर कहते हैं, और दिल-सहित फेफड़े की पूजा की जाती है । उस पर अर्ध्य चढ़ाया जाता है । फिर श्रद्धा के साथ अर्पित किया जाता है । इन तीर्थों के ऊपर आकाश में देखते ही देखते दर्जनों चीलें पता नहीं कहां से आकर नीची उड़ाने भरतीं और भोग के फेफडे के छोटे छोटे टुकडों को हवा में उछालते ही उन पर आक्रामक मुद्रा में झपटा मारकर ले उड़तीं । कभी एक भी टुकड़ा वापस ज़मीन पर गिरते नहीं देखा है ।

इस दृश्य विशेष का जो आनंद सुंबल और सीर में आता, उसके पीछे इन दोनों तीर्थों का प्राकृतिक परिवेश था ।

सुंबल में सीर की तरह ही नन्दिकेश्वर भैरव का तीर्थस्थान विशाल चिनारों के हरे भरे झुरमुट तले वितस्ता के बांये तट पर स्थित है । दोनों स्थानों पर वितस्ता काफी चौड़ी है और सोफियाना संगीत की तरह मंद-मंद बहती है । दोनों तीर्थों के मनोहारी घाट हैं जिनपर कुछ देर बैठकर आदमी का मन ही न करे कि अब उठा जाए । ध्यातव्य है कि सुंबल और सीर दोनों जगहों पर यह तीर्थ नदी के बायें तट पर स्थित हैं। यहां तक कि अनन्तनाग से होकर बहती वितस्ता के बायें तट पर ही वनपुह गांव बसा है जहां नन्दिकेश्वर का अस्थापन है ।

शक्ति-सम्प्रदाय में वाम-मार्गी तंत्र-साधना का महत्व सर्वविदित है। ये प्राचीन तीर्थ संभवतः इसीलिए इन जगहों पर नदी के बांये तट पर है। वितस्ता

चूंकि सती का कश्मीर में नदी-अवतार है और नन्दिकेश्वर भैरव रुद्र के 33वें अवतार हैं। इससे भी इनका साथ-साथ होना समझ में आता है। नन्दिकेश्वर के रुद्र अवतार वाले मिथक पर अन्यत्र अलग से चर्चा करेंगे। फिलहाल मैं बात कर रहा था सामिश भोग की जो कश्मीर में सिवाय महाराजा खीरभवानी के, लगभग हर देवी-देवता और भैरव पर चढ़ता है।

हालांकि महाराजा के महात्म्य के अनुसार खीरभवानी भी तान्त्रिक देवी हैं जो सतीदेश (कश्मीर) में आने से पूर्व श्रीलंका में श्यामा काली और त्रिपुरसुंदरी के रूप में विख्यात थीं और 'घोर भक्ष्या' थीं। वह तामसी और राजसी दोनों थीं। कश्मीर में वह शुद्ध सात्विक रूप में अवस्थित हुईं। चूंकि उनके कश्मीर में प्रादुर्भाव के मिथक में विष्णु के अवतार राम, सीता और हनुमान के प्रसंग भी अन्तर्गुम्फित हैं इसलिए उनके महात्म्य में वर्णित है :

सतीसरसि कश्मीर वैष्णवव्रत धारिणी

अर्थात् वह सतीसर में पुहंचकर वैष्णो धर्म का व्रत पालन करने वाली हैं। महात्म्य में शिव भैरव महाराज्ञा खीरभवानी को अपने से भी शक्तिशाली बताकर उन्हें ही कश्मीर तथा वहां के लोगों की दैहिक, दैविक और भौतिक तापों से रक्षा करने वाली देवी कहते हैं।यह शक्ति दृष्टि है। अतः सात्विक रूप में प्रतिष्ठित होने के कारण देवी का भोग दूध, मधु और खीर हैं; सामिश नहीं।

कश्मीर की अन्य प्रमुख देवियों में शारिका, शारदा, बाला, ज्वाला, व्रीड़ा भी तान्त्रिक देवियां हैं। इस कारण इनके अपने अपने नियत पर्वों पर और किसी भी शनिवार या मंगलवार को लोग सामिश-भोग 'तहर' और 'च़रवन' चढ़ाते थे। पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर में शारदा-तीर्थ पर बकरे की बलि देने की प्रथा रही है।

यही नियम कश्मीर घाटी में हर भैरव के साथ भी जुड़ा है। नन्दिकेश्वर इन सब भैरवों के भैरव हैं। उनके मंत्र में 'नन्दिकेश्वर भैरवाय नमः' वर्णित है जिसकी अलग से चर्चा की जाएगी। श्रीनगर में हारी-पर्वत स्थित अश्टादशाभुजा शारिका देवी के इर्द-गिर्द शहर के सीमान्तों पर स्थित

आनन्देश्वर भैरव (अमीराकदल), तुश्कराज भैरव (कर्णनगर), बहुखातकेश्वर भैरव (छताबल), मंगराज भैरव (हवल); हाटकेश्वर भैरव; विताल भैरव (रैणावारी), मंगलेश्वर भैरव (फतेकदल) तथा शीतलनाथ भैरव (सथु) है। श्रीनगर की भैगोलिक परिधि में ये प्रतिष्ठित अष्ट-भैरव हैं जो देवी शारिका की इच्छा को क्रियान्वित करते हैं।

भैरव होता क्या है, इसका सही सही अर्थ मुझे तब तक मालूम नहीं था जब तक कि मेरी नज़रों से 'शिव सूत्र' का पांचवा सूत्र नहीं गुज़रा। सूत्र है – 'उद्यमो भैरवः'। अर्थात् उद्यम भैरव है। चेष्टारत होना, प्रयासरत होना, साधनारत होना भैरव होना है। यह शाम्भव-उपाय है। चैतन्य होने के लिए ऊपर को उठना। जयदेव सिंह' के शब्दों में इस सूत्र का अर्थ है भावातीत चैतन्य का आकस्मिक कौंध जाना अर्थात् यह कौंध जाना चूंकि भैरव-चेतना का साधन है, अतः इसे भैरव कहेंगे। 'उद्यम उस आध्यात्मिक प्रयास को कहते हैं जिससे तुम इस काराग्रह के बाहर होने की चेष्टा करते हो। वही भैरव है। भैरव शब्द पारिभाषिक है। 'भ' का अर्थ है : 'भरण', 'र' का अर्थ है : रावण, 'व' का अर्थ है: वमन। भरण का अर्थ है: भारण, रवण का अर्थ है : संहार, और वमन का अर्थ है: फैलाना। भैरव का अर्थ है : ब्रह्म – जो धारण किये है, जो सम्हाले है, जिसमें हम पैदा होंगे, और जिसमें हम मिटेंगे; विस्तार है और जो ही संकोच बनेगा; जो सृष्टि का उद्भव है, और जिसमें प्रलय होगा। मूल अस्तित्व का नाम भैरव है।'[2]

जहां तक कश्मीर घाटी में स्थित अन्य भैरवों के तीर्थों का सम्बंध है, लगभग ऐसा कोई गांव, कस्बा, क्षेत्र, नगर, पुर नहीं जहां कोई न कोई भैरव नहीं। उदाहरण के लिए वेगराज भैरव (गांधरबल), देवराज भैरव (नुनर), वागेश्वर भैरव (मालमू), इहराष्ट्राधिपति भैरव (सोपोर), वैताल भैरव (बारामुला), गंगानंद भैरव (मट्टन), आनंदीश्वर भैरव (अनन्तनाग), जगन्नाथ भैरव (पुलवामा), जनकराज भैरव (बुमई), शशिकर्ण भैरव (रतनीपोरा), डांबरीश्वर भैरव (ब्रारी- आंगन), बुधराज भैरव (तुलमुल), परशुराम भैरव अथवा रेहराज़ भैरव (वड़वन), भूतेश्वर भैरव (राज़वेन गांव, वडवन और कानिहामा के बीच) इत्यादि।

इस तरह हमें कश्मीर में हर कहीं शिव के सक्रिय-रूप भैरव के दर्शन होते हैं । हर भैरव का अपना महात्म्य है, तंत्र है। उसकी अपनी परंपरा है, रीति-नीति है । जिनका अब तेज़ी से बदले हुए समय और परिवेश के साथ लोप होता जा रहा है । सही है 'पुराणम् इत्येवन साधु सर्वम्' । परन्तु परंपरा से आई हुई सब बातें हमेशा प्रासंगिक नहीं रहतीं । परंतु व्यास ने इसके साथ ही यह भी कहा है कि जो कुछ नया है वही बिना विचार किये ग्रहण करना भी ठीक नहीं ।

कश्मीर की परंपरा मुख्य रूप से शैवों और शाक्तों की परंपरा है । महाभारत से कुछ पहले श्रीकृष्ण ने स्वयं कश्मीर आकर कश्मीर के स्वर्गीय राजा दामोदर की विधवा और गर्भवती पत्नी यशोवती का राज्याभिषेक करते हुए कहा था - 'कश्मीर भूमि स्वयं साक्षात् पार्वती है। इस भूमि के राजा को शिव का अंश समझना चाहिए.....।'[3]

कश्मीर इस तरह प्राचीन काल से ही शिव और शाक्त-मत प्रधान देश रहा है जहां अन्य अनेक साधना-पद्धतियों के साथ ही साथ तंत्र-साधना भी खूब फलती फूलती रही है । आज बौद्ध धर्म का जो रूप हम लद्दाख और तिब्बत में पाते हैं उसपर भी इसका प्रभाव देखा जा सकता है ।

कश्मीर के शैव-दर्शन को तंत्र-साधना की अंतिम परिर्णात के रूप में देखा गया है। हम यह निश्चित रूप से नहीं कह सकते कि तांत्रिक-साधना का इतिहास कब शुरू हुआ होगा, इसकी परंपरा के विकास में किस प्रदेश की कितनी भूमिका रही है । इतना तो निःसंकोच कहा जा सकता है कि तांत्रिक जीवन-दर्शन हम तक श्रुति-परंपरा से पहुंचा है । तंत्र-साहित्य में आमतौर पर शिवमत और शाक्तमत दो अलग-अलग परंपरां तो लगती हैं, परंतु है नहीं । दोनों के मूल में एक ही सत्य है। शिव और शक्ति अभिन्न हैं । जो शिव है वही शक्ति है । यह कार्य ओर कारण की तरह आपस में जुडे हैं । जैसे नदी ओर उसका बहना ।

तंत्र-साधना में जिसे कौल-मार्ग अथवा वाम-साधना कहते हैं उसमें पंच-मकारों के भोग-अनुष्ठान का विधान है जिसमें मदिरा, मांस, मछली, मुद्रा और मैथुन आता है। कुलार्णव-तंत्र[4] में इसका स्पष्ट उल्लेख है । साधक

भौतिक जीवन के इन मकारों का, जीवन के प्रति सकारात्मक दृष्टि से अपने मूल स्वरूप का संज्ञान तथा उसके साथ सीधे साक्षात्कार हेतु भोग करते हुए कृत्रिम पाप-पुण्य के बोध से ऊपर उठता है । के.सी पाण्डेय[5] के शब्दों में कुलाणर्व-तंत्र निश्चयात्मक स्वर में सावधान करता है कि उसमें वर्णित यह तान्त्रिक अनुष्ठान तलवार की धार पर चलने जैसा कठिन और सिंह को कान से पकड़ने जैसा जोखिम भरा है । इस तान्त्रिक विधि में इन मकारों का भोग इन्द्रिय सुख हेतु न होकर परम आध्यात्मिक अनुभूति के लिए होता है ।

तंत्र-साधना को केवल पांच मकारों के भोग तक सीमित कर देखना मूर्खता है। यह एक समग्र जीवन-दर्शन है जो कश्मीर में लंबे अर्से तक रहा है। इस साधना के कई सोपान बताये गये है। इसमें चैतन्य सत्ता और उसके स्वभाव तथा कर्म, निवृत्ति, प्रवृत्ति, प्रत्यभिज्ञा, आभासवाद, स्वातंत्र्यवाद आदि अनेक महत्त्वपूर्ण विमर्श हैं ।

इसी साधना-पद्धति के अन्तर्गत कश्मीर में विभिन्न भैरवों के पूजा-अनुष्ठान को देखना होगा । भैरव रूप में नन्दिकेश्वर मे महात्म्य को समझने से पूर्व हमें फिर से भैरवी अवस्था को ध्यान में रखना पड़ेगा । यही अवस्था भैरव-रूप शंकर का स्वभाव अथवा उसका मूल स्वरूप है। यही सर्वस्वतंत्र चैतन्य सत्ता है और विश्व की आत्मा है । अपनी अनन्त शक्ति के मूल स्वरूप की अबाध अनुभूति से ही जब शंकर सृष्टि की रचना करते हैं, उसका पालन करते हैं, उसका संहार करते हैं, तब उसका वह भैरव रूप ही शंकर कहलाता है । इस तरह हर भैरव शिव है । उसका क्रियाशील रूप है । शैवागमों में इसीलिए शिव को भैरव कहा गया है । किसी महानकार्य के निष्पादन करने को इसी भाव से कश्मीरी भाषा में 'बॉरव करुन' कहते हैं अर्थात् 'भैरव करना' यानि उद्यम करना ।

शाक्त-योग के अंतर्गत कौलाचार मार्ग में एक संकाय नन्दिकेश्वर-पद्धति है। यह शाक्तों की तन्त्र-साधना में एक चिन्तन-पद्धति (स्कूल ऑफ थॉट) है। नन्दिकेश्वर इस तरह हमारे सामने एक अनन्य चिंतक, रहस्य-योग को जानने वाले, परम मनीषी के रूप में प्रकट होते हैं।

नन्दिकेश्वर-पद्धति की शुरूआत एक परम योगिनी पदमानद्यद से हुई कही जाती है। ध्यानवस्था में उन्हें इसकी दीक्षा मिली। परम रहस्यमय मंत्र का रहस्योद्घाटन हुआ । डॉ. चमनलाल रैणा[6] के अनुसार पदमानद्यद के उत्तराधिकारी शिष्यों के उत्तरोत्तर क्रम में वोकुर (सुंबल से वासुकरा के रास्ते तुलमुल जाते हुए) के पंडित निरंजननाथ रैणा ने इस पद्धति में दीक्षित होकर इस मंत्र को उसकी गायत्री सहित आगे प्रसारित किया । उन्होंने ही इसे सुविख्यात चित्रकार पं. त्रिलोक कौल सहित अनेक अभ्यर्थियों तक पहुंचाया। उन्हें दीक्षित किया । डॉ. चमनलाल रैणा के अनुसार उन्हें स्वयं भी पं. निरञ्जननाथ रैणा से ही यह दिव्य-संपदा मिली। वह दीक्षित हुए। उन्हें नन्दिकेश्वर का वास्तविक अभिप्राय समझ में आ सका।

रही बात नन्दिकेश्वर भैरव पर इस पुस्तक के लिखने के संयोग की । कश्मीर से विस्थापन के इधर के वर्षों में कश्मीरी भट्टों में अपनी सांस्कृतिक पहचान को नये सिरे से खोजने और उसे बचाये-बनाये रखने की जो चेतना जागी है उसके चलते जम्मू, दिल्ली, फरीदाबाद आदि जगहों में अनेक कश्मीरी तीर्थों का निर्माण किया गया है । इसी दृष्टि से सीर (सोपोर) के कुछ युवकों ने जम्मू में नन्दिकेश्वर भैरव का तीर्थ स्थापित करने का निश्चय किया । उनकी इच्छा थी कि वे इस भैरव के बारे में कुछ साहित्य प्रकाशित करें । यह सुखद संयोग ही है कि उनमें से एक युवक ने इस निमित्त मुझसे सम्पर्क किया और मुझे याद आये कॉलिज के वे दिन जब मैंने मन बना लिया था कि नन्दिकेश्वर भैरव के बारे में कुछ लिखूंगा।

सन्दर्भ :

1. Siva Sutras, The Yoga of Supreme Identity Jaydev Singh, Page 30

2. शिव दर्शन, ओशो रजनीश, पृ. 34

3. राजतरांगिणि, कल्हण, तरंग 1072 :

कश्मीराः पार्वती तत्र राजाज्ञेयों हरांशजः ।

नावज्ञेयः स दुश्टोऽपि विदुशा भूतिमिच्छता

(अर्थात् कश्मीर भूमि साक्षात् पार्वती है। इस भूमि को शिव का अंश समझना चाहिए । यदि यहां का राजा दुष्ट भी हो (दामोदर की तरफ परोक्ष संकेत० - लेखक) तो भी ऐश्वर्य चाहने वाले बुद्धिमान को कभी भी उसका विरोध नहीं करना चाहिए।)

4. कुलार्णव तंत्र 2.124 :

अनाग्रेहयं अनालोक्यं - अस्पृश्यंचाप्यापेयकं
मद्यं मामसं पाशुनान्तु कोलिकाकानं महाफलं

5. Abhinav Gupta : A Historical and Philosophical Study :
K.C Pandey, Page 559-60

6. Manuscript on 'Shri Nandkeshvara of Sumbal (from Man to Divinity) a discourse in Kashmiri by Pt. Niranjan Nath Raina; English rendering: Dr. Chaman Lal Raina, (Foot note on Page No. 9).

नन्दिकेश्वर का प्रादुर्भाव

नन्दिकेश्वर भैरव के प्रार्दुभाव से जुड़े कथा-सूत्र हमें कश्मीर की लोक-परंपरा के अतिरिक्त शिवपुराण, वामनपुराण, नीलमतपुराण में यहां-वहां मिलते हैं।

कल्हण ने अपनी राजतरंगिणि[1] में महर्षि व्यास के किसी शिष्य द्वारा रचित नन्दिपुराण का उल्लेख किया है जिसे पढ़कर महाराज जलौक ने सोदर (नारान नाग) में नन्दिकेश्वर की तपस्या की थी। यह पुराण आज दुर्लभ बताया जाता है। एक अन्य पुराण का भी उल्लेख हमें किसी-किसी ग्रंथ में मिलता है जिसे बृहद् नन्दिकेश्वर पुराण के नाम से जाना जाता है। ये दोनों पुराण स्वाभाविक रूप से नन्दिकेश्वर के महात्म्य, प्रादुर्भाव तथा उनकी चिन्तन पद्धति, जिसे नन्दिकेश्वर-पद्धति भी कहते हैं, को केंद्र में रखकर लिखे गये होंगे।

एक लोक-परंपरा के अनुसार नन्दिकेश्वर का जन्मस्थान सीर है जो सोपोर तहसील के अन्तर्गत आता है। संस्कृत में सीर शब्द का अर्थ भी नन्दि होता हैं। यहां के लोग नन्दिकेश्वर भैरव को 'नंदबब' के नाम से पुकारते हैं। बब कश्मीरी भाषा में पिता या बुज़ुर्ग को कहते हैं।

सीर नन्दिकेश्वर का जन्मस्थान होने से इसलिए भी प्रसिद्ध है कि इस तीर्थ पर प्रसाद स्वरूप बनने वाली तहरी में हल्दी नहीं डाली जाती। यहां की सफेद तहरी नन्दिकेश्वर भैरव के सौम्य स्वरूप की सात्विकता के प्रतीक के रूप में मान्य है।शेष सभी सथानों पर जहां इस भैरव के तीर्थ हैं, पीले चावल बनते हैं जो तान्त्रिक-साधना और बौध-परंपरा की स्मृति की निरंतरता है। लोक परंपरा है कि सीर के ही एक निःसन्तान ब्राहमण ने घोर तपस्या के फलस्वरूप शिव से उसके ही अंश रूप एक अयोनिज पुत्र का वरदान पाया था। पुत्र का नाम नन्दि रखा गया।

एकदिन किसी जोगी से जब ब्राह्मण को नन्दि की अल्पायु के बारे में

पता चला तो वह बहुत दुःखी हुआ । बालक नन्दि पिता के दुःख का कारण जानकर भगवान शिव की घोर तपस्या करने के क्रम में जहां-जहां रुकेः वहां आज उसके तीर्थ हैं। लोक विश्वास के अनुसार सुंबल में नन्दिकेश्वर भैरव का राज-दरबार है। इसीलिए यहां वह 'बब' न होकर 'नन्दिकेश्वर-महाराज' के रूप में विख्यात हैं । यहां तक कि स्थानीय मुसलमान भी उन्हें 'नन्दीराज़' कहकर पुकारते हैं । नन्दि की तपस्या से प्रसन्न होकर भगवान शिव ने उसे मनुश्य-शरीर में ही अमरता का वरदान दिया और उन्हें अपने प्रमुख भैरव अथवा सर्वश्रेष्ठ गण के रूप में प्रतिष्ठित किया ।

मुझे कई बार नन्दि की इस जीवन-गाथा में प्रसिद्ध कश्मीरी लोक कथा 'अकनन्दुन' के बीज दिखाई देते हैं । दोनों कथाओं का एक सा विकास-क्रम है, एक सी वेदना है, दोनों की परिणति सुखांत में होती है । हालांकि अकनंदुन का सुखांत तक पहंचने से पहले वीभत्स प्रक्रियाओं से गुज़रना पड़ा था, जबकि नन्दि विस्मयकारी कष्टप्रद हठयोग की प्रक्रियाओं से होकर अमरत्व को प्राप्त होता है ।

नन्दिकेश्वर से संबंधित एक अन्य लोक कथा के अनुसार आदि कल्प में सुंबल के इन्द्रकूट स्थान पर एक ब्राह्मण-दंपति के यहां बालक नन्दि का जन्म हुआ। यह कथा सुंबल के आस-पास के भौगोलिक परिवेश से इतने आत्मीय रूप से जुड़ी हुई है कि हम इस कथा के स्थानीय रंग से चमत्कृत हो उठते हैं।

बालक नन्दि के बारे में जब उसके माता-पिता को यह पता चलता है कि वह पांच वर्ष की आयु में अकाल मृत्यु को प्राप्त होगा । उनपर जैसे वज्राघात होता है । वे ज़ार ज़ार रोते हैं और अपने ईष्टदेव की आराधना करते हैं । सुंबल क्षेत्र में जो वर्तमान शिलवथ गांव है, उसे वह स्थान माना जाता है जहां नन्दि के पिता शिलाद अथवा मुंडशूल ने अपने ईष्ट की तपस्या की थी। उनकी पूजा-अर्चना से प्रसन्न होकर उनके इष्टदेव ने उन्हें भाग्य के लेखे को बदल देने वाली जगत-जननी महाशक्ति के महात्म्य का आश्वासन दिया । दूसरे दिन अमरकुंडल (वर्तमान मरकुंडल) से चलकर उनके तपोवृद्ध गुरू उनके यहां चले आये।

उसने नन्दि के माता-पिता को निर्देश दिया कि वह उसे दूसरे दिन प्रभात वेला में मानसबल भेजें, जहां स्वयं प्रजापति ब्रह्मा सभी देवताओं को, जिनमें विष्णु और शिव भी सम्मिलित होते हैं, तिलक लगाते हैं, उन्हें चिरायु होने का आशीर्वाद देते हैं । बालक नन्दि ने देवों की सभापुरी (वर्तमान सफापुर) के तटपर जाकर ब्रह्म-मुहूर्त्त की प्रतीक्षा की । वहां पहुंचने के क्रम में वह अहिटेंग (वर्तमान आहटेंग) पर भी रूके । वहां अहियों के देव महादेव का स्मरण किया ।

नन्दि ने जब देखा कि मानसबल में प्रजापति ब्रह्मा प्रकट होकर सभी देवताओं को आशीर्वचन के साथ स्वयं तिलक लगाने को उद्यत हुए हैं, तो वह युक्ति से देवताओं की पंक्ति में जा घुसे । इससे पहले कि कोई देवता मानव शरीरधारी बालक नन्दि को देखकर उसे वहां से बहिष्कृत करता वह आगे-आगे सरकट ब्रह्मा के सामने पहुंच अपने माथे पर तिलक लगवाकर ब्रह्मा के सौ वर्ष पर्यन्त जीने का वरदान पा चुके थे ।

प्रजापति ब्रह्मा को ज्यों ही अपनी गलती का ज्ञान हुआ वह चिन्तातुर हो उठे । देवताओं ने इस विषय पर चर्चा करने के लिए उस स्थान पर सभा बुलाई जहां सुंबल में नन्दिकेश्वर तीर्थ का गर्भगृह है । इस सभा की अध्यक्षता स्वयं महादेव ने की बताई जाती है । महादेव ने अपने पास अमरत्व को प्राप्त हुए नन्दि को देवताओं के सामने वहां पर बिठाया, जहां पर आज चिनार के नीचे नन्दिकेश्वर का पीठ है । उसकी मूर्तियां हैं,जो सैंकडों वर्ष पुराने चिनार के तने की ऐंठन में खुबी हुई हैं। सभा में विष्णु के यह पूछने पर कि प्रजापति ब्रह्मा से मिले दिव्य वरदान के पश्चात् नन्दि की देवलोक और मनुष्यलोक में क्या भूमिका रहेगी । इस पर महादेव ने सभा में अपना निर्णय देते हुए देवताओं से कहा कि नन्दिकेश्वर आज से मेरे सभी भैरवों के भैरव होंगे, रुदों के रुद्र होंगे । वह श्री पार्वती के प्रिय पुत्र कहलायेंगे। यह घटना ज्येष्ठ अमावस्या की प्रभात बेला में घटित हुई बताई जाती है ।

नन्दिकेश्वर भैरव की यह कथा मैंने बचपन में कई बार अपने तीर्थस्वरूप पिता श्री जानकीनाथ सुंबली से सुनी थी और बाद में सुंबल के

अपने कई बुजुर्ग संबंधियों से भी सुनी । यों तो मैं कश्मीर का चप्पा-चप्पा घूमा हूं । मैं जीवन में जितनी बार सुंबल गया हूं मुझे हरबार पिता की सूक्ष्म बयौरों के साथ सुनाई नन्दिकेश्वर की कथा स्मरण हो आती । मानसबल में नौका विहार करते मुझे इस मिथक में वर्णित इस झील में देवताओं को तिलक लगाते ब्रह्मा का बिंब स्मरण हो आता । कश्मीर के प्राकृतिक सौंदर्भ को उसके स्थानीय मिथकीय आधार के साथ देखना एक अद्वतीय अनुभव संसार की सृष्टि करना है ।

एक अन्य कथा-प्रसंग में वर्णित है कि नन्दिकेश्वर शिव पार्वती के द्वारपाल हैं । नीलमतपुराण (श्लोक 1150) में भी शिव उन्हें याद दिलाते हैं कि पूर्वजन्म में वह उनके द्वारपाल थे :

स्मरस्व पूर्वकं जन्म प्रतीहारे भवान् मम् ।

उपर्युक्त कथा-प्रसंग में पार्वती उन्हें अपना द्वारपाल नियुक्त करती हैं ताकि वह उस सरोवर क्षेत्र में किसी को प्रवेश न करने दे जहां पार्वती स्नान करती थीं । अपने कर्तव्य-पालन में स्फूर्ति से जुटे नन्दिकेश्वर शिव को उस निशिद्ध क्षेत्र में प्रवेश करने से नहीं रोक पाये जहां पार्वती स्नान कर रही थीं। नन्दिकेश्वर क्षुब्द, हताश, किंकर्तव्य-विमूढ़ हुए । वह ग्लानि और लज्जा के बोध से ग्रस्त रहे । नारद ने भी उनकी मानसिक दशा जानकर उन्हें इस ग्रन्थि से उबरने को कहा । उसे सान्त्वना दी। वह शिव को शक्ति के पास जाने से कैसे रोक सकते थे । दोनों अभिन्न थे । जब वह उसके बाद महादेव के समझाने से भी शांत नहीं हुए तो पार्वती ने दयावश नन्दिकेश्वर को प्रकृति और पुरूष अथवा शिव-शक्ति का गूढ़ रहस्य समझाया । इस अचिन्तय रहस्य का उद्घाटन किया । उसे तीनों लोकों में इस विद्या का सर्वश्रेष्ठ ज्ञाता बनाया।

शिवपुराण में हमें नन्दिकेश्वर भैरव की जो कथा मिलती है उसके अनुसार जब शिलाद ऋषि ने, जो कश्मीरी लोक परंपरा में 'मुंडशूल' के नाम से प्रसिद्ध हैं, अयोनिज पुत्र प्राप्ति के लिए शिव की आराधना की तो प्रसन्न होकर शिव ने उनसे कहा- 'हे तपोधन, पहले मेरी ब्रह्मा ने आराधना की थी

तथा देवताओं व मुनियों ने भी अवतार के निमित्त तप किया था । मैं तुम्हारे यहां नन्दि नामक अयोनिज पुत्र रूप में प्रकट हूंगा।'

मित्रावरुण ऋषि से अपने अल्पायु होने का रहस्य जानकर नन्दि ने महावन जाकर एक बड़ी शिला के नीचे शिव की कठोर आराधना कर उनसे अयोनिज होने और शिव-गणों के अधिपति होने का वरदान पाया । पार्वती ने उसे पुत्र रूप में स्वीकार किया। कांगडा स्थित चामुंडा नन्दिकेश्वर क्षेत्र में लोक परंपरा है कि यहीं पर नन्दि नन्दिकेश्वर के नाम से प्रसिद्ध हुए और आज भी उसी शिला के नीचे, जो वहां तीर्थ में है, लिंग रूप में विराजमान है।[2] इसी तरह अन्य संदर्भों से, विशेषकर शतरुद्र संहिता से, नन्दिकेश्वर भैरव के बारे में स्पष्ट उल्लेख मिलता है कि वह रुद्र के 33वें अवतार हैं ।

नीलमत पुराण[3] में नन्दि की कथा बृहद्र्श्व कश्मीर नरेश गोनंद को विस्तार से सुनाते हैं। नीलमत पुराण के अनुसार पूर्वकाल में शिलाद नामक एक ब्राहमण ने पुत्र प्राप्ति के लिए नन्दि पर्वत पर जाकर सौ वर्ष तक कठोर तपस्या की । अन्न के बदले शिलाचूर्ण खाया जिसे देखकर महादेव ने प्रसन्न होकर उसे अपना एक महाबली गणेश पुत्र रूप में प्रदान करने का वचन दिया ।

अपने पुत्र रूप में शिलाद को दिये जाने पर नन्दि ने महादेव से सविनय कहा कि वह इस ब्राहमण के यहां पुत्र के रूप में जन्म तो लेंगे , परंतु अयोनिज रूप में और यह भी कि वह मुनष्य रूप में ज़्यादा देर तक नहीं रहना चाहेंगे । इस पर महादेव नन्दि को भृगु ऋषि के शाप का स्मरण दिलाते हैं । उमा के विवाह के अवसर पर नन्दि द्वारा समुचित सम्मान न पाकर भृगु ऋषि ने उसे मनुष्य रूप में पैदा होने का शाप दिया था । नन्दि को निरुपाय सा देखकर महादेव ने उन्हें आश्वासन दिया कि वह मनुष्य रूप में ही सदा उनके निकट रहेंगे और स्वयं शिव भी उनकी इच्छा के फलस्वरूप सदा नन्दि के पास ही रहेंगे ।

इसलिए, बृहद्र्श्व कहते हैं, नन्दि भूतेश्वर पर महादेव के सानिध्य में सदैव पाये जाते हैं । यह भूतेश्वर पर्वत हरमुकुट गंगा का एक प्रमुख पर्वत है

जिसे कश्मीरी में 'बुथ्यहेर' के नाम से जाना जाता है। कालान्तर में एक दिन शिलाद को एक चट्टान के बीच से अयोनिज पुत्र नन्दि की प्राप्ति होती है। शिलाद की बांछें खिलती हैं।

और एक दिन पुत्र प्राप्ति के उसके हर्षोल्लास पर ऐसा कुठाराघात होता है कि शिलाद फूट फूटकर रो पड़ता है। उसे ब्राहमणों से पुत्र के अल्पायु होने की बात पता चलती है। पिता की यह दारुण दशा देखकर स्वयं नन्दि उसे आश्वासन देते हैं कि वह शिव को प्रसन्न करेंगे और उनसे दीर्घायु होने का वरदान पायेंगे।

नन्दि के पिता की आज्ञा से हरमुकुट के शिखर पर उसकी पूर्व दिशा में पाप-नाशिनी कालोदक झील में सिर पर एक भारी चट्टान धरकर सौ वर्ष पर्यन्त रुद्र की तपस्या की। अपने पुत्र नन्दि की तपस्या से अभिभूत होकर पार्वती शिव से कहती हैं कि वह उसकी आराधना स्वीकार कर उसे मनोवांछित वर दें। इस तरह वृशभ पर सवार होकर शिव और पार्वती कालोदक पहुंचकर भूख, शीत और मृत्यु-भय से घिरे नन्दि को देखते हैं। उन्हें अन्य देवगणों सहित साक्षात् सामने देखकर नन्दि सिर पर धरी चट्टान एक तरफ फेंक कालोदक से बाहर आ शिव की वंदना करते हैं।

नन्दि को मनुष्य लोक में इसी शरीर में मृत्युञ्जय का वरदान मिलता है। प्रमुख गण होने अर्थात् गणाधिपति की पदवी मिलती है। वह इसी शरीर को धारण करते हुए सदैव शिव के सामीप्य में भूतेश्वर के निकट निवास करने का भी वरदान पाते हैं।

नन्दिकेश्वर भैरव के जीवन को रेखांकित करते उसके मिथक में कई महत्त्वपूर्ण तथ्य छिपे हुए हैं। इस पौराणिक कथा में यदि मुझे अकनंदुन लोक-कथा के बीज भी दिखाई दिये, इसी से मिलती-जुलती पौराणिक कथा मार्कण्डेय ऋषि की भी तो है। और भी कई कथाएं हो सकती हैं। इसका कारण है मनुष्य की आदिम जिजीविशा मनुष्य ने जब से होश संभाला है, उसने जीवन से प्रेम किया है। वह मृत्यु के विरुद्ध आजीवन शक्ति संजोने

में लगा रहा है । उसके जीने की इच्छा को, उसके हार न मानने के संकल्प ने, उसकी दृढ़ता और साहस ने हमेशा से ऐसे अद्‌भुत आख्यान रचे हैं, जो जीवन की गरिमा, उसकी भव्यता और उसके सारतत्व को दर्शाते हैं। ऐसी कथा-कहानियों के मूल में यही 'मोटिफ' पाया जाता है और उसके अलग-अलग आद्य-रूप हो सकते हैं।

मिथक का अभिप्राय

वास्तव में हम मिथकों में अपने होने की तलाश करते हैं। अपनी जातीय स्मृतियों की एक विकास रेखा हमारे यथार्थ, हमारी आस्थाओं से होकर हम तक पहुंचती हुई लगती हैं । प्रकृति के आभास से अनुप्रेरित मिथक अपने में एक स्वप्न लिए हुए होता है, इसे आप मनुष्य की दुर्दम्य जिजीविशा भी कह सकते हैं। इसीलिए मिथकों का जादुई कल्पना-संसार अनन्त दिक्-काल से अन्तर्गुम्फित होता है ।

नन्दिकेश्वर का शिव से सृष्टि का गूढ़ रहस्य जानने के लिए सविनय प्रश्न करना क्या मनुष्य के अन्तस में मूल जिज्ञासा का प्रतीक नहीं, जिससे प्रेरित होकर हम अपने और ब्रह्मांडीय अस्तित्व के रहस्यों को नित्य जानना चाहते हैं? इस मूल प्रश्न की छानबीन करते हुए इस का समुचित रहस्योद्‌घाटन करने वाला गुरू या योगी यह ज्ञान हर चलते-फिरते व्यक्ति या साधक को नहीं दे सकता । इसके लिए योग्यता चाहिए । पात्रता चाहिए । संभवतः इसीलिए शिव ने नन्दि को नन्दिकेश्वर बनने के उपरांत ही यह रहस्य प्रकट किया। भवानीनामसहस्र का यह परम गुह्य रहस्य शिव ने अपने पुत्र स्कन्ध को भी नहीं बताया था। संभवतः उसमें जिज्ञासा ज़रूर रही होगी, योग्यता अथवा पात्रता न रही होगी।

मैं नन्दिकेश्वर भैरव की जीवन-गाथा के अभिप्राय को इसी प्रकाश में देखता हूं । उसका अल्पायु होना उसे दीर्घायु या मृत्युंजय बनने की आदिम कामना से उत्तेजित करता है । फिर हम इस कहानी में जीवन-मृत्यु के द्वन्द्व और भावों को परोक्ष रूप में समझने लगते हैं । वास्तव में जब नन्दि को अपनी अल्पायु का पता चलता है, यह उसके अस्तित्व को लेकर सजग होने

का महत्त्वपूर्ण क्षण है । जीवन और उसकी अनन्त संभावनाओं को टटोलने का क्षण है जिसे ऐसी कहानियों में घोर तपश्चर्या के माध्यम से अभिव्यक्ति मिलती है। तपस्या के फलीभूत होने का सांकेतिक अर्थ मनुष्य की त्रासद पीड़ाओं के बाद उसके स्वप्नों तक पहुंचने या मानव-विकास के रहस्यों को जानने का अभिप्राय होता है । इस तरह इन पौराणिक आख्यानों में वर्तमान मनुष्य के जीवन-मृत्यु के द्वंद्व के प्रति सचेत होकर कई अर्थों में चिर जीवित होने का आदिरूप मिलता है ।

पुराणों में जीव-सृष्टि को जलचर, नभचर, थलचर इन तीनों वर्गों में विभाजित कर देखा गया है । यह जीव-सृष्टि स्वेदज (पसीने से उत्पन्न), अण्ड़ज (अंडे से उत्पन्न), अद्भिज (बीज से उत्पन्न) तथा पिंड़ज (गर्भ धारण के बाद उत्पन्न) है। नन्दिकेश्वर अयोनिज हैं। अर्थात् वह मनुश्य-रूप में स्वयंभू सृष्टि हैं । यह स्वयंभू सृष्टि जिसे इस आख्यान में अयोनिज कहा गया है इस बात का द्योतक है कि सृष्टि में ऐसा भी जीवन संभव है जिसके कारण-तत्वों के बारे में हमें कुछ भी विदित नहीं । अथवा जीवन आदिम-रूप में स्वयंभू प्रकट हुआ, इसलिए अनादि है। अर्थात् परम ईश्वरीय सत्ता के रूप में जो भैरव, रुद्र या अन्य किसी रूप में सृजन, स्थिति और संहार करता है, उसे कोई नहीं सिरजता । वह स्वयं इन स्थितियों से परे है और उनका कारण स्वरूप भी वह स्वयं है । इसीलिए नन्दि रुद्र हैं। हम नहीं जानते कि रुद्र के माता पिता कौन हैं। वह अयोनिज सत्ता है ।

इस तरह नन्दि का जन्म और उसके बाद उसका जीवन-संघर्ष मृत्यु पर विजय पाने की कथा है जो सहज ही मानव-अस्तित्व और उसके गूढ़ रहस्य को जानकर चिरंजीवी हो जाने का मार्ग दर्शाती है ।

सन्दर्भ :

1. राजतरंगिणि, कल्हण, तरंग 1.123
2. श्री चामुण्डा नन्दिकेश्वर का इतिहास एवं महात्म्य, पृ.33 और 44
3. नीलमतपुराण, श्लोक : 1068 से 1168 तक

नन्दिकेश्वर का रुद्र अवतार

पुराणों में ऐसे कई सन्दर्भ-संकेत मिलते हैं जिनसे नन्दिकेश्वर का रुद्र होना सिद्ध होता है । उन्हें रुद्र का 33वां अवतार कहा गया है, जिसका अर्थ हुआ कि शिलाद के यहां उनके अयोनिज पुत्र के रूप में पैदा होने से पहले रुद्र के 32 अवतार हो चुके थे। ये 32 रुद्र अवतार कौन थे और कब-कब हुए इस बारे में हमें अधिक जानकारी नहीं मिलती। यह भी कम विस्मयकारी तथ्य नहीं कि नीलमत-पुराण हमें जिन 11 रुदों की जानकारी देता है उनमें नन्दिकेश्वर का नाम नहीं है। नीलमत-पुराण (श्लोक 632 और 633) में वर्णित 11 रुद्रों के नाम हैं - अंगारक, सूर्य, निऋति घोष, अजैकपाद, अहिर्बुघ्न्य, धूम- केतु, ध्वज-वाहन, ईश्वर, मृत्यु, कपाली और कंकण ।

इन 11 रुद्रों में नन्दिरुद्र का नाम क्यों नहीं है? क्या इन रुद्रों के बहुत पश्चात् नन्दि का अवतार हुआ ? अथवा इन्हीं ग्यारह रुद्रों में नन्दि किसी अन्य नाम से वर्णित हैं? इन 11 रुदों में एक ईश्वर नाम के रुद्र हैं, क्या यह नन्दिकेश्वर हो सकते हैं ? ऐसा तो कदापि नहीं हो सकता कि कश्मीर के धार्मिक-सांस्कृतिक अथवा आध्यात्मिक जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान एवं प्रतिष्ठा रखने वाले नन्दिरुद्र की नीलमत-पुराण अनदेखी कर सके । जिस नीलमत-पुराण में लगभग एक सौ श्लोकों में नन्दि की जीवन-कथा कही गई हो, नन्दिक्षेत्र के अन्तर्गत आने वाले तीर्थों के महात्म्य का बखान किया गया हो उसके रचयिता से ऐसा अपेक्षित नहीं। तो क्या हम इस निष्कर्श पर नहीं पहुचते कि कश्मीरी जन-मानस में नन्दिकेश्वर रुद्र से कहीं अधिक शिव के भैरव रूप में मान्य हैं । हालांकि कल्हण की राजतरंगिणि (तरंग 1/124 से 130) में नन्दि को नन्दीश के साथ ही एक बार नन्दिरुद्र भी कहा गया है ।

वास्तव में ऋग्वैदिक देवताओं में रुद्र की शिव की अपेक्षा ज़्यादा प्रतिष्ठा है। यह कहना समीचीन होगा कि शिव एक सर्वमान्य देवता के रूप में ऋग्वेद में सिरे से गायब हैं। वह भैरवों, भूतों, पिशाचों, नागों, दैत्यों, प्रेतों तथा राक्षसों के आराध्य हैं तथा सूनी जगहों, पर्वतों की कन्दराओं, चोटियों,

श्मशानों पर रहते हैं। कापालिक हैं। उनका पाशुपत धर्म है । यह सारी बातें ऋग्वैदिक आर्यों को उनसे दूर करती हैं । इसीलिए शुरु-शुरु में उन्होंने शिव को भी असुर कहा है । वायु पुराण में साक्ष्य है । ऋग्वैदिक आर्य-देवताओं के चरित्र सभ्य, सम्भ्रान्त और शालीन हैं। दक्ष प्रजापति का शिव के प्रति जो अवहेलना का भाव है, वह भी इसी संदर्भ में देखा जाना चाहिए । ऋग्वैदिक आर्यों ने शिव (लिंग) के उपासक शैवों को इसी के चलते 'शिश्ने देवः' कहकर चिढ़ाया है ।

शिव को रुद्र के रूप में मिली मान्यता बहुत बाद की बात है । भजन सिंह 'सिंह' अपनी चर्चित पुस्तक 'आर्यों का आदि निवास : मध्य हिमालय' में कहते हैं, 'ऋग्वैदिक देवताओं में रुद्र का महत्त्वपूर्ण स्थान है। रुद्र कुटिलगति, अभीष्ट फलदायक, क्रोधी और मेधावी थे (ऋ० 1/114/4)। वे जटाधारी, वीरों के विनाशक, आयुर्वेद के आचार्य थे । मनु को उन्होंने कई रोगों और भयों से मुक्त किया था (ऋ०1/114/2)। देवतागण उनसे स्वास्थ्य-लाभ की कामना करते हैं (ऋ०1/114/1)। वे अनेक औषधियों के ज्ञाता थे (ऋ०1/114/10)। ऋग्वेद प्रथम मंडल, सूक्त 114 के सम्पूर्ण 11 मंत्रों में उनका स्तवन है। देवताओं और असुरों दोनों पर उनकी समान कृपा-दृष्टि थी। दोनों के लिए उनकी दया का द्वार सदैव उन्मुक्त रहता था, परन्तु उनके कट्टर उपासकों में असुरों की संख्या देवताओं से अधिक थी । इसलिए देवता बार-बार उनसे अपनी और अपने कुटुम्बियों की प्राण-भिक्षा मांगते हैं (क्र०1/144/7,8)। उनकी स्तुति में कहते हैं कि हमारे पक्ष में कहो, हमें सुख दो (ऋ०1/114/10)। कैलास क्षेत्र में स्थापित इनका आश्रम सुर और असुर स्नातकों से परिपूर्ण अनेक विद्याओं का प्रमुख शिक्षा केन्द्र था ।

रुद्र प्रकृति से उग्र देवता थे। उनका निवास-स्थान पृथ्वी और अन्तरिक्ष (कैलास) पर था। वे पृथ्वी और कैलास के अधिपति बताये गये हैं (ऋ० 6/114/10, 10/64/1) । सुरभि और प्रजापति कश्यप से जिन 11 रुद्रों की उत्पत्ति हुई थी उनमें रुद्र (शिव) सबसे तेजस्वी थे । नागपुर परगने (मध्य-हिमालय क्षेत्र) में कोलपर्वत, जहां मंदाकिनी और गंगा का संगम होता है, रुद्र का क्षेत्र है (केदारखण्ड 294/10)।''

ऋग्वेद के उक्त मंत्रों में रुद्र के ऐतिहासिक और भौगोलिक सन्दर्भ मिलते हैं। देवताओं और असुरों दोनों पर उनकी समान कृपा-दृष्टि का होना इस बात का संकेत है कि यहां तक आते-आते शिव और वैदिक रुद्र एक दूसरे में घुलमिल गये हैं। शिव का रुद्रत्व और रुद्र का शिवत्व पाना वैदिक देवताओं और असुरों के पारस्परिक समन्वय तथा समावेश का परिणाम है। इसके विकास-क्रम में आर्य-अनार्यों, देव-असुरों की एक दूसरे की आस्थाओं, परंपराओं, रीति-रिवाजों के प्रति सहिष्णुता, संवेदनशीलता की भूमिका स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। रुद्र सूर्य के समान दीप्तिमान, स्तुतिरक्षक, औष्धियुक्त, अभीष्ट, अत्यन्त महान, स्वर्ण से उज्ज्वल, उत्कृष्ट ज्ञान से युक्त तथा समस्त देवताओं में श्रेष्ठ कहे गये। उनके ये गुण भजन सिंह 'सिंह' ने विस्तार से गिनाते हुए गढ़वाल के उत्तर (कैलास क्षेत्र) में रुद्र प्रयाग, रुद्र नाथ, तुंगनाथ, मद्महेश्वर और केदारनाथ तीर्थों में शिव के रूप में वैदिक रुद्र की स्मृति सुरक्षित बताई है।

यों तो आर्यों की असुरोपासक पर्वतीय शाखा के आराध्य देव शिव में भी ऐसे कम चारित्रिक गुण नहीं गिनाए गये हैं। महाभारत तथा अन्य शिव सम्बंधी पुराणों एवं ग्रन्थों से उनके योग, तंत्र-मंत्र, धनुर्विद्या, आयुर्वेद, नृत्य, गायन, वादन, रसायन-शास्त्र तथा अन्य विद्याओं के आचार्य होने के उल्लेख मिलते हैं। शिव को दीर्घजीवी, सांख्ययोग के प्रवर्त्तक और अनेक शिल्पों का आचार्य कहा गया है। वे आयुर्वेद, पारदकल्प, धातुकल्प, हरिताल कल्प, रसार्णवतंत्र, वैद्यराज तंज, रुद्रयामलतंत्र आदि शास्त्रों के प्रणेता थे। कैलास क्षेत्र में शिव के आचार्यत्व एवं कुलपतित्व में एक ऐसा विद्याकेन्द्र स्थापित था, जिसमें आर्य-अनार्य, देव- असुर साठ सहस्र स्नातक सदैव शिक्षा पाते थे। इस शिव-आश्रम में 'प्रथम शिव सुतारः' के पश्चात् क्रमशः अट्ठाईस शिवों को आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया गया था। पुराणों से प्रमाणित है कि ऋषि-महर्षियों ने ही नहीं, दैत्य व दानवों ने भी भगवान् शिव से असाधारण ज्ञान प्राप्तकर विश्व में अद्वितीयता अर्जित की है।[12]

अब जहां तक नन्दिकेश्वर के रुद्र होने का संबंध है, हमें यह अनुमान लगाने में कठिनाई नहीं होगी कि नन्दिकेश्वर किस बृहत् धार्मिक-सांस्कृतिक

पृष्ठभूमि, विचार-सम्पदा और सामाजिक दायित्व-बोध के ईश्वर हैं। राजतरंगिणि[3] में उनका नन्दीरुद्र के रूप में उल्लेख, कश्मीर में सर्वाधिक लोकप्रिय रुदयामल-तंत्र में नन्दिकेश्वर-संवाद, उनके बीज-मंत्र (ह्रीं श्रीं नन्दिरुद्राय नमः) में उन्हें नन्दिरुद्र कहा जाना यह संकेत करता है कि भैरव के साथ-साथ वह रुद्र रूप में भी मान्य हैं। कल्हण[4] श्रीनगरी में ज्येष्ठरुद्र के मंदिर का उल्लेख करता है। यह महाराजा जलौक ने बनाया था। जलौक नन्दिरुद्र का इतना परम भक्त था कि कल्हण उसे नन्दीश का अवतार कहता है। इसका अर्थ यह हुआ कि नन्दिरुद्र के साथ ही साथ ज्येशठरुद्र की भी पूजा का विधान रहा होगा। नीलमत-पुराण में जो 11 रुद्र बताये गये हैं उनमें पहले रुद्र का नाम अंगिरा है, इसलिए यह ज्येष्ठरुद्र नहीं। सुरभि और कश्यप से जो 11 रुद्र हुए उनमें सबसे तेजस्वी शिव थे। संभवतः यह ज्येष्ठरुद्र भी रुद्र के 33 अवतारों में से एक होंगे। या ज्येष्ठ मास की अमास्या को प्रकट होने के कारण शिलादपुत्र नन्दि ही ज्येशठरुद्र कहलाये हों। निश्चय के साथ कुछ भी नहीं कहा जा सकता।

वैसे नीलमतपुराण[5] के कपटेश्वर प्रसंग से हमें यह भी पता चलता है कि कश्मीर में कपटेश्वर तीर्थ पर स्नान करने तथा काष्ठरूप में उपस्थित महेश्वर को छूने मात्र से श्रेष्ठ ऋषि रुद्र बन जाते थे। अथवा कश्मीर में ऋषियों को रुद्र पदवी मिलती थी। इसी प्रसंग में एक गौरपराशर नाम के एक परम तपस्वी ब्राह्मण ने जब शिव से प्रार्थना की कि वह यहां उसी तरह काष्ठ के रूप में सब लोगों के लिए प्रकट रहें जिस तरह कि वह ऋषियों के लिए रहे हैं, तो शिव बोले -

अयं च सततं नन्दी काश्ठरूपी गणो मम।
दर्शन दास्यते नृणां तदनुग्रहकाम्यया ।।

अर्थात् उनके अनुग्रह की कामना से मेरा यह गण नन्दि मनुष्यों के दर्शनों के लिए हमेशा यहां काष्ठ (लकड़ी) रूप में दृश्यमान रहेंगे। कपटेश्वर को वर्तमान कुटहार परगना में कुठर गांव के रूप में चिन्हित किया गया है।

इस प्रसंग के अध्ययन से भी नन्दि के रुद्र होने का प्रकारान्तर से साक्ष्य मिलता है। कपटेश्वर में काष्ठ को देखने, स्नान करने या काष्ठ को छूने

मात्र से जब रुद्रत्व प्राप्त होता रहा है तो क्या नन्दि उससे वंचित रहे होंगे? इसके अतिरिक्त वामन-पुराण में भी शिलादपुत्र नन्दि को गण कहा गया है। उनका नाम शिलादी बताया गया है, जिसने घोर तपस्या के बाद मनवांछित फल पाया। पुराण सहित्य में ऐसे भी सन्दर्भ मिलते हैं जिनसे शिव के अधीनस्थ अनेक रुद्र गणों का उल्लेख मिलता है। दक्ष के यज्ञ में वीरभद्र तथा मणिभद्र के नेतृत्व में जिन शिव गणों ने सती-दहन के बाद जो विध्वंस किया, उसमें नन्दि की भी प्रमुख भूमिका रही होगी। कश्मीर की लोकपरंपरा में नन्दि को इस प्रसंग के सन्दर्भ में वीरभद्र के समतुल्य ही देखा जाता है।

जालन्धर पीठ के अन्तर्गत ज़िला कांगड़ा में श्री चामुण्डा नन्दिकेश्वर दक्षिणाभिमुखी हैं तथा लिंग रूप में विराजमान माने जाते हैं।

रुद्र यत्ते दक्षिणं मुखं तेन मां पाहि नित्यम्

अर्थात् हे नन्दिकेश्वर रुद्र, जो तुम्हारा दक्षिण मुख है उससे नित्य हमारी रक्षा करो। क्योंकि 'एकोहि रुद्र न द्वितीयाय तस्थुः' (यजुर्वेद) अर्थात् अन्तकाल में एक ही रुद्र शेष रहते हैं।

वाल्मीकि रामायण के उत्तरकाण्ड के 16वें सर्ग में नन्दिकेश्वर के स्वरूप का वर्णन इस तरह आया है :

इति वाक्यान्तरे तस्य करालः कृष्णपिंगलः।
वामनो विकटो मुण्डी नन्दि ह्रस्वभुजो बली।।
ततः पार्श्वमुपागम्य भवस्यनुचरोऽब्रवीत।
नन्दिकेश्वर वचश्चेदं राक्षसेन्द्रम शंकितः।।

अर्थात् उसकी बात ही बात में नन्दिकेश्वर रावण के पास (शरवण नाम के किसी सरकंडों से भरे वन में जहां एक पर्वत पर शिव एकान्त में ध्यानस्थ थे) पहुंचे। वह देखने में बड़े विकराल थे। काले और पिंगल रंग की उनकी देहकांति थी। उनका कद छोटा और रूप विकट था। सिर मुंडा हुआ और बाहें छोटी छोटी। लेकिन थे बड़े बलवान। राक्षसराज रावण से निःशंक होकर बोले........।

यह नन्दिकेश्वर के विकट रूप की एक झलक है जो कश्मीर से बाहर हिमाचल में प्रचलित है। उनका दूसरा रूप इस प्रकार है :

नन्दी चतुर्भुजो रक्तः चतुर्वक्तः त्रिलोचनः ।
बीजगर्भ मुंडशूलं चिन्तयेत विघ्ननाशनम् ।।
श्री पार्वती प्रियं पुत्रं परमेश्वर सेवकम् ।
भक्तरक्षाकरं चैव त्वं वन्दे नन्दिकेश्वरम् ।।

अर्थात् नन्दिकेश्वर की चार भुजाएं हैं, रक्तवर्ण है देह की कान्ति, चतुर-सुजान हैं, ज्ञानी हैं। उनके तीन नेत्र हैं। मुंडशूल के पुत्र हैं। उनका चिन्तन मात्र करने से विघ्नों का नाश होता है। वह पार्वती के प्रिय पुत्र हैं । परमेश्वर के सेवक हैं। अपने भक्तों की रक्षा करने को तत्पर रहते हैं। ऐसे नन्दिकेश्वर को नमस्कार पहुंचे ।

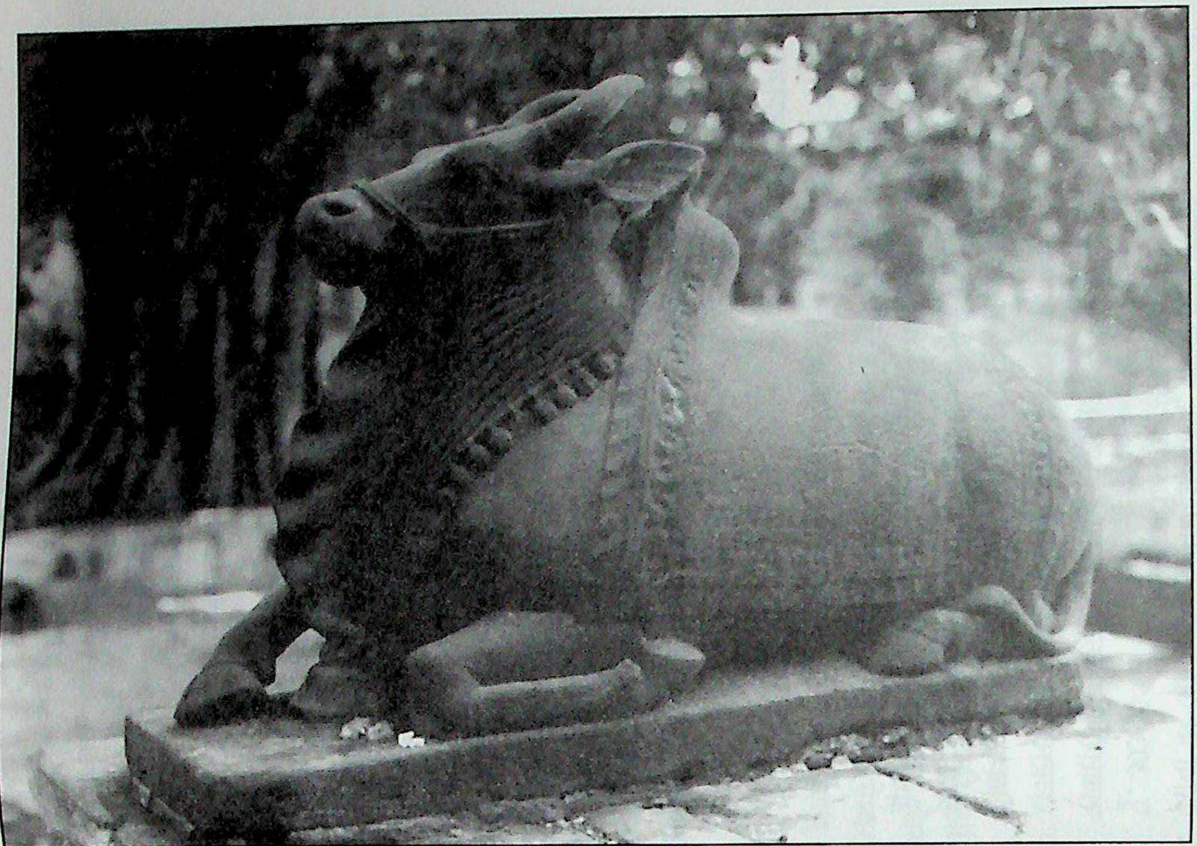
कश्मीर में नन्दिकेश्वर रुद्र का यही रूप सर्वमान्य है । यह भी विश्वास है कि बर्फ सा सफेद घोड़ा उनका वाहन है । यहां तक कि विवाह सम्बंधी लोकगीतों में नन्दिकेश्वर को विवाहित बताया गया है। उनकी पत्नी मंगला देवी हैं । विवाह समारोह के दौरान वर या वधु की मेंहदी के महूर्त्त पर लोकगीतों में कहा जाता है कि इस अवसर पर 'आज घर में पार्वती-शिव स्वयं पधारे हैं, वर-वधु की मेंहदी लगाने के लिए। मेंहदी लगाने का यह शकुन मंगला देवी और नन्दिकेश्वर पूरा करता है।'[6]

'क्रूल खारुन' अर्थात् घर के द्वार पर विविध रंगों से बेल-बूटों के भित्ती चित्र बनाने के अवसर पर भी स्त्रियां गाती है :

इस पुरातन सुन्दर गृह पर बन रहे बेल बूटे,
पाया है हमने मां भवानी के अनुग्रह से यह घर।
सुभद्रा मां ! कौन आया है तुम्हें देने आशीर्वाद
स्वयं आये हैं यहां मंगला देवी- नन्दिकेश्वर।[7]

सन्दर्भ :

1. आर्यों का आदि निवासः मध्य हिमालय, भजन सिंह 'सिंह', पृ.160
2. आर्यों का आदि निवासः मध्य हिमालय, भजन सिंह 'सिंह', पृ. 303-304
3. राजतरंगिणि, कल्हण, तरंग : 1.124, 130
4. राजतरंगिणि,कल्हण, तरंग : 1.124
5. नीलमतपुराण,श्लोक : 1185,1186,1187,1188, 1189,1190
6. श्रेष्ठ कश्मीरी लोकगीत, डॉ जिया लाल हण्डू, पृ.16
7. श्रेष्ठ कश्मीरी लोकगीत, डॉ जिया लाल हण्डू, पृ. 37



नंदि – उधा नरेली दा मूर्ति शिला

वृशभ रूप नन्दि

प्रायः हर हिन्दू देवी-देवता का अपना एक वाहन बताया गया है। इन वाहनों की अपनी एक मिथकीय भूमिका है। अपने प्रतीक-अर्थ हैं। भारतीय वाङ्गमय से जगत की सृष्टि, स्थिति, तथा संहार की जिस परम ईश्वरीय सत्ता को अमूर्त, अलख, निगुर्ण, अकाल, अगम, अगोचर आदि दार्शनिक पदों से अभिव्यक्त किया गया है, उसके विविध मिथकीय स्वरूप निश्चित करते हुए उनके वाहनों की जो कल्पना की गई है वह अद्भुत है। इन वाहनों का संबंध हमारी पृथ्वी के जीवों से है। ऋषियों ने इन्हें प्रकृति से, अपने आस-पास से लिया है। अर्थात् पारलौकिक देवताओं को इहलौकिक आधार देकर उन्हें मनुष्य-जीवन के साथ परोक्ष-रूप में जोड़ने की कोशिश की गई है।

पौराणिक मिथकों के अभिप्राय (मोटिफ) आद्यरूप तथा उनके विकासक्रम के विद्वान यह जानते हैं कि ये विविध देवी-देवता भी मूल रूप से किसी न किसी गहन अभिप्राय के प्रतीक हैं। ठीक इसी तरह इन देवताओं के वाहन भी अलग-अलग अर्थ-संकेतों से भरे हैं। विष्णु का वाहन गरुड, शिव का वृशभ, ब्रहमा का हंस, जगदम्बा का सिंह, गणेश का मूशक, कार्तिकेय का मयूर, सरस्वती का हंस आदि-इत्यादि देवी-देवताओं के वाहन साभिप्राय हैं। चूंकि ये कथित वाहन अपने-अपने देवताओं के लगातार सानिध्य में होते हैं इसलिए इनमें भी हम उनके वाहक देवताओं के गुण-धर्म देखते हैं। यहां तक कई बार ये वाहन रूप देवता अपने वाहक देवता के साथ एकात्म होते हैं। एक तरह से उन्हीं के प्रतिनिधि होते हैं।

जहां तक शिव के वाहन देवता वृशभ का प्रश्न है वह भी नन्दि रूप में प्रसिद्ध हैं। यह संभव है कि वृशभ और नन्दि मिथक-निर्माण के शुरुआती दौर में अलग-अलग दो व्यक्तित्व रहे हों और पुराणों में इसके सन्दर्भ भी मिलते हैं। परंतु विकासक्रम में नन्दि और वृशभ दोनों एक हो गये लगते हैं। नन्दि ही वृशभ है और वृशभ ही नन्दि। नन्दि नाम से आज भी भारतीय जनमानस तत्काल शिव के वृशभ की स्मृति से कौंध उठता है। नन्दि अपने

1. कृपया हर कहीं वृषभ पढ़ें

पूर्वजन्म में शिव के गण तो थे ही, शिलाद या मुंडशूल के यहां अयोनिज पुत्र के रूप में प्रकट होने से पूर्व ही हमें नन्दिग्राम, नन्दिपर्वत, नन्दिक्षेत्र जैसे स्थानों का नामकरण इस दिशा में सोचने पर विवश करता है। अर्थात् जो शिलाद का पुत्र हुआ वह पहले भी नन्दि ही थे। नीलमत-पुराण में शिलाद के यहां अयोनिज पुत्र के रूप में प्रकट होने से पूर्व शिव उन्हें इसी नाम से संबोधित करते हैं। इसी नाम से पुकार कर उन्हें भृगु से मिले शाप का स्मरण दिलाया जाता है।

लोकमानस में विश्वास है कि वृश रूप में नन्दि सदा शिव के साथ-साथ रहते हैं। जहां शिव हैं वहां नन्दि अर्थात् वृशभ भी हैं। नीलमतपुराण के अनुसार कालोदक (कालसर) की झील में सिर पर भारी चट्टान धरकर सौ वर्ष की घोर तपस्या से प्रसन्न होकर शिव ने उन्हें गाणपत्य आदि जितने भी वरदान दिये, उनमें एक यह भी है कि जहां नन्दि रहेंगे वहीं पास में शिव भी रहेंगे। इसलिए भारतीय मानस में वृशभ के लिए एक विशेश सम्मान और भक्ति भाव है। नीलमतपुराण (श्लोक 1133) में कहा गया है कि धर्म वृश रूप धारणकर शिव का वाहन बना - वृशरूपधरो धर्मो वाहनत्वम्-उपागतः। महाभारत के शांतिपर्व (342,88) में भी उल्लेख आता हैः

वृशो हि भगवान् धर्मः
स्मृतो लोकेशु भारत।

शिव इसी वृशभ पर आरूढ़ हैं। उनका आधार धर्म रूप नन्दि है। कहीं-कहीं तो वृशभ को धर्म, अर्थ काम तथा मोक्ष-इस पुरुषार्थ चतुष्टय का प्रतीक भी बताया गया है। एक सफल भौतिक एवं आध्यात्मिक जीवन-दर्शन का सूत्र है पुरूषार्थ चतुष्टय। यह यों ही नहीं है कि गीता में कृष्ण नें अर्जुन को 'पुरुषर्शभ' कहकर सम्बोधित किया है - पुरूषों में वृशभ के समान। यह वीरों और राजाओं का प्रशस्ति-पद है।

पुरुषों में वृषभ होना क्या होता है, इसे जानने के लिए वृषभ के मिथकीय महत्व के अलावा यदि हम यह देखें कि वृश राशि के लोगों का स्वभाव कैसा होता है तो हम बहुत हद तक अर्जुन से कृष्ण की अपेक्षा का

अनुमान लगा सकते हैं । हालांकि कृष्ण की अपेक्षाओं से हम पहले से ही परिचित हैं फिर उन अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए अर्जुन को 'पुरुषों में वृशभ' क्यों कहा गया- इसे समझ सकेंगे। वृश राशि के लोग कठोर परिश्रमी, खुले दिल से खर्च करने वाले, भौतिक दृष्टि संपन्न, ऐशो-आराम वाले, धुन के पक्के, हठीले, कर्मठ और अपमान-बोध को न भूलने वाले होते हैं। यहां यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि स्वयं कृष्ण की राशि भी वृश बतायी गई है।

नन्दि के चारित्रिक गुणों में हमें ये सभी लक्षण मिलते हैं। एक भारतीय विश्वास के अनुसार यह पृथ्वी वृशभ के सींगों पर टिकी हुई है । अर्थात् पृथ्वी पर जीवन कृषि पर टिका हुआ है और कृषि-प्रधान समाज-जीवन बैल पर आधारित है। इसी से पृथ्वी का आधार वृशभ बताया गया है। दिनकर कौशिक[1] के शब्दों में दक्षिण में 'पोंगल' उत्सव उत्पादकता एवं प्रचुरता के इस प्राचीन प्रतीक (वृशभ) के प्रति हमारे आदरभाव को आज भी स्थायित्व प्रदान किये हुए है ।'

धर्म का स्वरूप होने से वृशभ का रंग सफेद बताया गया है। कालिदास[2] रघुवंश में वृश को हिमाच्छादित कैलास जैसा सफेद बताते हैं । जानकीनाथ कौल 'कमल'[3] के शब्दों में शिव और उनका वाहन वृशभ दोनों सफेद हैं । सफेद रंग नैतिकता, न्यायप्रियता, पवित्रता और पुण्यधर्मिता का प्रतीक है जिसके बिना सद्गति संभव नहीं। न सद्गतिः स्याद् वृशवर्जितम् (कीर्ति कौमुदि क-9) ।

कल्हण अपनी राजतरंगिणि (तरंग 3/199) में शिव की अपेक्षा उसके वाहन नन्दि को बड़ा फलदायक बताते हुए कहते हैं कि वह वरदान में चमकता हुआ सोना देते हैं । रणजीत सीताराम पंड़ित[4] के अनुसार वृशभ समुद्र-मंथन के दौरान (चौदह रत्नों में से) एक रत्न के रूप में निकले थे। दक्षिण में प्राचीन काल से शिव-उपासना, लिंग-पूजा की लोकप्रियता देखते हुए तथा एक देवासुर-संग्राम में पराजित होने पर असुरोपासक शिव-भक्तों का दक्षिणदेश में जाकर बसने की पौराणिक घटना को देखते हुए नन्दि (वृशभ) का समुद्र मंथन के मिथक से जुड़ जाना स्वाभाविक प्रतीत होता है ।

कपालमोचन-महात्म्य के अनुसार वर्तमान शुपयन (कश्मीर) में द्विगाम में कपालमोचन तीर्थ का कुंड नन्दि (वृशभ) के खुर से बना है। यहां अल्पायु में मरे बच्चों, पाने में डूबे, अग्नि में जले, आत्महत्या से मरे, दुर्घटनाग्रस्त हुए, या भूत-प्रेत से बाधित मृतकों की मुक्ति के लिए श्राद्ध किया जाता है। यह भी लोक विश्वास है कि इस तीर्थ पर श्राद्ध करने से नरक में पड़े, प्रेतयोनि, पशु-पक्षियों की योनि में पड़े पितरों का उद्धार होता है। ऐसे तीर्थ का निंमाण नन्दि (वृशभ) ने किया । अर्थात् वह मनुष्यों के धर्म, अर्थ और काम के अतिरिक्त उनकी मोक्ष-परक आकांक्षाओं का सम्मान करने वाले देवता हैं । कपालमोचन तीर्थ के महात्म्य में वर्णित है कि एकबार ब्रह्मा और विष्णु का दर्प भंग करने के लिए शिव ने एक अतुलनीय और अमाप ज्योतिर्लिंग को प्रकट किया और उसका आदि अंत पाता लगा आने को दोनों से कहा ।

विष्णु थक-हारकर उस ज्योतिर्लिंग का आदि (आधार) जानने में असमर्थ हुए और लौट आये । ब्रह्मा ने गो, शंख और केतकी पुष्प को झूठी गवाही देने के लिए तैयार किया और शिव से ज्योतिर्लिंग का ऊपरी सिरा देखकर आने की बात कही। गो, शंख और केतकी शापग्रस्त हुए । ब्रह्मा का सिर काटकर शिव ने उसका पानपात्र बनाया । इस ब्रह्म-हत्या से मुक्ति के लिए शिव ने बहुत तीर्थाटन किया। राक्षसी के रूप में ब्रह्महत्या उनका पीछा करती रही । काशी में स्नान करने से वह छूट गई। मणिकर्ण में उनके हाथ से ब्रह्मा का कपाल, जो शिव के हाथ से चिपक ही गया था, छूट गिरा । फिर भी कपाल की एक अस्थि उनके हाथ से नहीं छूट गिरती थी। कश्मीर में शुपयन (प्राचीन शूर्पायण) के पास काशी में छूटी ब्रह्म- हत्या जब एक बार फिर प्रकट हुई तो शिव ने नन्दि (वृशभ) को उसके पीछे लगा दिया ।

ब्रह्महत्या के पीछे दौड़ते-दौड़ते एक चट्टान में नन्दि का खुर अटक गया, जहां बाद में उस धंसी हुई जगह में एक कुण्ड बना। इसी कुण्ड में अन्ततः शिव के हाथ से चिपकी हड्डी भी छूट गिरी और वह ब्रहमहत्या से मुक्त हुए। नन्दि के खुर से बने इस कुण्ड पर उस समय सूर्य भी प्रकट हुए और उन्होंने ही इस तीर्थ का नामकरण 'कपालमोचन' भी किया । इस तरह नन्दि ऐसे देवता हैं जो अपने उपास्य शिव के भी उद्धारक हैं । अपने आराध्य

देव के संकटमोचन रूप में हनुमान भी प्रसिद्ध हैं जो नन्दि की तरह ही रुद्र के अवतार बताये गये हैं ।

इस तरह हम देखते हैं कि भारतीय जनमानस में प्राचीनकाल से वृशभ का महत्त्व अप्रतिम है । हम मिथकों में शिव को ही वृशारूढ़ नहीं पाते, अपितु ऐसी कई देवियां हैं जिनका उल्लेख भवानीनामसहस्र में आता है, जो वृशारूढ़ बताई गई है। उदाहरण के लिए एक देवी हैं वृशप्रिया जो शिव के अवतार नन्दि (वृशभ) की प्रेयसी हैं । जानकीनाथ कौल 'कमल'[5] के शब्दों में एक बार पाताल लोक में विष्णु द्वारा उत्प्रेरित उपद्रव का अध्ययन करने के आशय से शिव वृशभ के रूप में अवतरित हुए।

इस वृशभरूप में पाताल-लोक में पहुंचकर उन्होंने उपद्रव को शांत करना चाहा, परंतु अवांछित स्थिति बनी रही । वृशभ ने पाताल-लोक को मनुष्यों के लिए निशिद्ध होने का शाप दिया । शिवपुराण (शतरुद्र संहिता) आधारित इस कथा के अनुसार वृशप्रिया वृश रूप शिव की अभिन्न शक्ति का नाम है। इस मिथक में वृशभ (नन्दि) की प्रेयसी वृशप्रिया ही लोकगीतों में मंगला देवी हैं। गोट्यूंग (कुपवारा) में नन्दिकेश्वर का जो तीर्थ है उससे लगभग 8 कि.मी दूर गुंडगुशी में शारदा के अलावा मंगलादेवी का तीर्थ भी होना इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है।

वृशभ नाम से समबंधित अन्य देवियां इस प्रकार है :

वृशारूढ़ा : वृश पर आरूढ़ देवी महागौरी हैं जिन्हें नव-दुर्गाओं में आठवीं देवी कहा जाता है - 'महागौरीति चाष्टकम्' । यह श्वेतवस्त्र धारण करने वाली दीप्तिमान देवी महादेव की शक्ति हैं । यही चण्डी-कवच में 'ईश्वरी वृशवाहना' के रूप में भी वर्णित हैं ।

वृशस्यन्तीः यह परा शिव की सृजन शक्ति के पीछे कामप्रवृत्ति की देवी हैं। यह सृष्टि करती हैं भरण-पोषण करती हैं, संहार करती हैं । जानकीनाथ कौल 'कमल'[6] के शब्दों में वृशस्यन्ती शूर्पनखा जैसी एक कामप्रवृत्त स्त्री को कह सकते हैं जिसने कामोत्तेजनावश पंचवटी में राम के सामने निर्लज्जता से

विवाह का प्रस्ताव रखा था। परन्तु यहां सृष्टि रचने की तत्परता को यह रूप अभिव्यक्त करता है। वह कन्या भी है और मां भी। (अविनत कुचां विश्वजननीं)[7]। यहां प्रकारान्तर से वृशभ (नन्दि) कामुकता के प्रतीक रूप में सामने आते हैं।

वृशकणाई : ऋग्वेद में वर्णित श्रद्धा, इड़ा, शची, इन्द्राणी, आग्नायी, सूर्या आदि अनेक देवियों में एक देवी हैं वृशकणाई।

इसी तरह कई वैदिक और पौराणिक ऋषियों, असुरों के नाम भी वृश से संबंधित हैं। इनमें एक प्रमुख नाम हैं असुरराज वृशपर्वा, जिसकी पुत्री शर्मिष्ठा थी। शर्मिष्ठा से दाम्पत्य संबंध स्थापित कर ययाति के दो पुत्र हुए थे और प्रतिज्ञा भंग करने के अपराध में उन्हें आचार्य शुक्र से युवावस्था में ही वृद्ध होने का शाप मिला था।

इस प्रकार देखा जाए तो नन्दि का वृशरूप भी प्राचीनकाल से उतना ही सार्वभौमिक रहा है जितना कि स्वयं शिव रूप। भारत सहित पूरे संसार में जहां-जहां भी शिव उपासना का जो भी स्वरूप प्रचलित रहा है वहां-वहां नन्दि-वृशभ का पाया जाना स्वाभाविक माना जा सकता है। भजन सिंह 'सिंह'[8] के अनुसार 'कैलास क्षेत्र से देवासुर संग्रामों के पश्चात्, आर्यों द्वारा पराजित एवं बहिष्कृत इस क्षेत्र के असुरोपासक शैव आर्यों के पश्चिमी अभियान में ईरान तथा दक्षिण में पहुंचकर पारसी और द्रविड़ों के रूप में स्मृतिस्वरूप इन लिंगाकार शिलाओं की स्थापना कर शिव-संस्कृति की विशिष्ट लिंग-पूजा पद्धति को सुरक्षित रखा। मक्का में काले पत्थर की एक शिला (जिसे 'संगे असवद' कहते हैं) केदारनाथ की काली शिला की भांति प्रतिष्ठित है जिसकी मुसलमान भक्तिपूर्वक परिक्रमा करते हैं और उसे चूमते हैं।' ज़ाहिर है इन स्थानों पर नन्दिरूप वृशभ भी विद्यमान रहे होंगे।

भारत की भांति मिस्र और मेसोपोटामिया की प्राचीन सभ्यताओं में भी पशुओं के पूजे जाने के प्रमाण मिलते हैं। तीनों सभ्यताओं में शारीरिक शक्ति के प्रतीक वृशभ का महत्त्वपूर्ण स्थान है। खासकर कूबड़वाला वृश।

राहुल सांकृत्यायन[9] के शब्दों में ईसवी सन् के आरम्भ में कुशाणों के सिक्कों पर एक तरफ हाथ में त्रिशुल लिए महेश्वर और दूसरी तरफ शिव का नन्दी (बैल) बना रहता है।'

सिन्धु घाटी संस्कृति से सम्बंधित जो चीज़ें मिली हैं उनमें 'एक मोहर है जिस पर वृशभ की आकृति बनी है। (उस) वृशभ की अपनी एक अजीब शान है। इस प्रतिमा के वास्तविक आकार-प्रकार की अपेक्षा इसके भागवत समानुपातों का वैभव कहीं अधिक है। वृशभ की आकृति कुछ ऐसी है मानो वह अपने भौतिक परिवेश में से उभरकर ऊपर उठने की प्रक्रिया में हो। उसकी आकृति की वक्र रेखाएं तरंगों की तरह चलती हैं - लगता है मानो भीतर से उठ-उठकर आ रही हों। कुछ ऐसा प्रतीत होता है मानो ऊर्जा का कोई भीतरी स्रोत है जिसकी प्रेरणा से वृशभ ऊपर उठता हुआ आकार ग्रहण कर रहा है।'[10]

ऐलोरा के कैलासनाथ मंदिर, जो कैलास पर्वत की प्रतिकृति है, उसके आगे ओसार शिव के वाहन नन्दि के लिए हैं। ऐसे हज़ारों संदर्भ भारतवर्ष के प्राचीन मंदिरों में हैं। जहां तक भारत से बाहर दूरस्थ देशों का संबंध है, प्राचीन यूनान में फल्लुस देवता को सुप्रसिद्ध इतिहास- विद् कर्नल टॉड ने शंकर देवता माना है। फल्लुस संस्कृत के फलेश शब्द का बिगड़ा रूप है। योगेश चंद्रशर्मा दैनिक 'अमर उजाला' के एक अंक में 'विश्वव्यापी देवता हैं शंकर' शीर्षक से लिखे अपने आलेख में इस संदर्भ में अनेक महत्त्वपूर्ण जानकारीयां देते हैं। उनके अनुसार यूनान के समान ही रोम में भी लिंग-पूजा (ट्रियेसस) की प्रथा ही थी। यहूदियों के देवता बेलफेंगों की पूजा भी प्रारंभ में लिंग के रूप में ही की जाती थी तथा उस लिंग के सामने बैल की भी मूर्ति रखी जाती थी। इतना ही नहीं औसिरस देवता का इथियोपिया के चंद्रपर्वत से निकली नील नदी से वैसा ही कुछ संबंध है जैसे हमारे यहां शिव का गंगा से है।

प्राचीन अमेरीका में भी लिंग-पूजा के प्राचीन प्रमाण पाये गये हैं। वहां की कतिपय जनजातियों में जो सिवु नामक देवता हैं वह शिव ही लगते हैं। कंबोडिया का अंगोरथोम नामक शिवमंदिर तो वहां सर्वाधिक प्रसिद्ध है। इसी तरह वेटिकन-नगर तथा इटली में भी लिंग- उपासना के प्रमाण दिये जाते हैं।

'जहां शिव, वहां नन्दि' के मिथकीय हवाले से सहज अनुमान लगाया जा सकता है कि ऊपरोक्त सभी देशों में नन्दि की पूजा भी प्रचलन में रही होगी। लोगों ने मूर्तियां गढ़ी गढ़ी होंगी। भले ही कश्मीर के राजा संधिमत आर्यराज[11] की तरह उनपर नन्दि की विशालकाय मूर्तियां बनवाने का वैसा उन्माद न रहा हो।

सन्दर्भः

1. काल और कला, दिनकर कौशिक, पृ. 19
2. रघुवंश, कालिदास 11.35
3. Bhavaninam Sahasrastutih, J.N Kaul 'Kamal', Page 163
4. Rajtarangini- The Saga of the Kings of Kashmir, Ranjit Sitaram Pandit, Page 85 (footnote)
5. Bhavaninam Sahasrastutih, J.N. Kaul 'Kamal', Page 163
6. Bhavaninam Sahasrastutih, J.N. Kaul 'Kamal', Page 385
7. पंचस्तवी
8. आर्यों का आदि स्थानः मध्य हिमालय, भजन सिंह 'सिंह', पृ.306
9. विविध प्रसंग (संकलित लेख 'शैवधर्म का इतिहास'), 1988।
10. काल और कला , दिनकर कौशिक, पृ. 18
11. राजतरंगिणि, कल्हण, तरंग 2.133

नन्दिकेश्वर-कथा के भौगोलिक-संदर्भ

कश्मीर प्रान्त :
नन्दिकेश्वर भैरव/रुद्र के प्रादुर्भाव तथा उनके पूर्वजन्म से जुड़े जिन-जिन स्थानों, तीर्थों, पर्वतों नदियों तथा सरोवरों का उल्लेख उनके महात्म्यों, मंत्रों, कहानियों में हमें मिलता है, मैं यहां उनकी भौगोलिक पहचान रेखांकित करने का प्रयास करना चाहूंगा ।

कालोदक : यह हरमुकुट अथवा हरमुख के पूर्व में स्थित सर है। इसे कश्मीरी पंडित कोलसर के नाम से जानते हैं । कालोदक तथा हरमुकुटगंगा से निकलने वाली कुल्या को कालोदका अथवा नंदक्वल कहते हैं । नंदक्वल का अर्थ है नन्दि की कुल्या। पं. जानकीनाथ कौल 'कमल'[1] के अनुसार इस कालोदक का नीलवर्णी भीतरी भाग (काल शिव) वह स्थान है जहां शिव ध्यानस्थ हुए और उसका बाहरी भाग जिसका जल हल्के हरे रंग का है नन्दि की जगह है । यहीं शिलाद-पुत्र नन्दि ने शिव की तपस्या की थी । यहीं पर नन्दिकेश्वर ने शिव से 'भवानीनामसहस्रस्तुति' सुनी। इसी कालोदक (कालसर) के दाहिने कोने में दीपक के आकार एक छोटा सा कुंड है जिसे कश्मीरी में 'च़ॉन्य नाग' कहते हैं । इस दीपक-नाग की अपनी एक कथा है, जो मुझे वहां एक स्थानीय मुसलमान बुज़ुर्ग ने सुनाई थी। यह दीपकनाग यहां किसकी प्रतीक्षा में है, दुर्भाग्य से वह सारी कथा मेरी स्मृति से उतर चुकी है ।

नन्दिपर्वत : यह पर्वत भी हरमुकुट की तलहटी पर स्थित है । डॉ. वेदकुमारी[2] ने नन्दिपर्वत, नन्दिकुण्ड और नन्दीश्वर को हरमुकुट की तलहटी में स्थित बताया है । उनके अनुसार नन्दिपर्वत, वे उतंग ग्लेशियर होने चाहिए जो नंदक्वल और कालोदक के जल का स्रोत हैं ।

भरतगिरि : डॉ. वेदकुमारी[3] कल्हण की राजतरंगिणि[4] के हवाले से इसे हरमुकुट के दक्षिण-पश्चिम में स्थित पर्वत बताते हुए सूचित करती हैं कि इसे आज भी उसके प्राचीन नाम से जाना जाता है और कालोदक अर्थात्

कालसर तथा नन्दिक्षेत्र में पड़ने वाले अन्यतीर्थों की यात्रा करने वाले इसके दर्शन करते हैं । नन्दि के घोर तप से प्रसन्न होकर जब पार्वती सहित शिव वृशारूढ़ होकर उसे वरदान देने के लिए कालोदक जाते हैं तो मार्ग में यह तीर्थ पड़ता है ।

वसिष्ठ-आश्रमः डॉ. वेदकुमारी[5] के शब्दों में यह वर्तमान वांगथ गांव है जिसका 75°2′ अक्षांश और 34°21′ रेखांश है। नीलमतपुराण हमें सूचित करता है कि शिव से मनोवांछित वरदान पाने के बाद हरमुकुट के दामन में यशस्वी वसिष्ठ ने देवताओं के साथ मिलकर महादेव की एक मूर्ति प्रतिष्ठित की । उस मूर्ति के पश्चिम में उसने वहां पर नन्दि की मूर्ति भी प्रतिष्ठित की । पूर्वकाल में भृगु ऋषि के शाप के परिणाम-स्वरूप तथा शिव के वरदान के फल-स्वरूप नन्दि सदैव वहां निवास करते हैं और उसका मन रखने के लिए शिव भी सदा वहीं रहते हैं।[6]

नन्दिक्षेत्र :- डॉ० त्रिलोकी नाथ गंजू[7] के अनुसार नन्दिक्षेत्र वर्तमान नाराननाग, जो कंगन से होते हुए वांगथ के आगे पड़ता है और जो भूतेश्वर अथवा 'बूथ्यहेर' (बूथ्यशेर भी) पर्वत की तलहटी में स्थित है। इस दृश्टि से देखा जाए तो सोनमर्ग, कंगन से हरमुख के इस पार बांडीपुर, सुंबल, श्रीनगर, गुलमर्ग तथा सीर-सोपोर तक का क्षेत्र नन्दिक्षेत्र रहा होगा। वर्तमान बारामुला (प्राचीन वराहमूल) से कुपवारा के सीमान्त तक का इलाका वराहक्षेत्र है । इसी तरह विजयक्षेत्र के अंतर्गत वर्तमान अनंतनाग आता है। इसे कश्मीर के भौगोलिक खंडों के पारंपरिक नामों कमराज़, यमराज़ तथा मराज़ के आदिरूप की दृष्टि से भी देखना अप्रासंगिक न होगा।

मुण्डपृष्ठगिरिः कालोदक की ओर जाते हुए शिव इष्टपथतीर्थ (वर्तमान रामाराधन के पास, जहां लोक-विश्वास के अनुसार त्रेतायुग के परशुराम ने आकर तपस्या की थी) के बाद भरतगिरि चढ़ते हुए जिस पर्वत को पांव से ठोकर मार कर उसका दर्प चूर करते हैं, वहीं इसी नन्दिक्षेत्र में कहीं स्थित है। कश्मीर की लोकपरम्परा में नन्दि के पिता का नाम शिलाद न होकर राजा मुण्डशूल है, जो मुण्डपृष्ठ का ही रूप दिखता है।

नीलमतपुराण में वर्णित है कि शिलाद को एक दिन एक शिला तोड़ते हुए उसमें से रुपहली कांति का पुत्र-रत्न प्राप्त हुआ । इसलिए लोक-परंपरा में नन्दि के पिता के रूप में जो मुंडशूल प्रसिद्ध हैं, वह मुंडपृष्ठ (पर्वत) का अपभ्रंश हो सकता है ।

सोदर : भूतेश्वर (पर्वत) जिसे कश्मीरी में 'बुथ्यशेर' कहते हैं के निकट स्थित यह एक प्राचीन कुण्ड हैं । इसे वर्तमान में नारान-नाग के नाम से भी जाना जाता है । बांडीपुरा क्षेत्र में ध्यानेष्वर महादेव की पर्वतीय गुफा के निकट भी एक नारान-नाग है जिसमें स्नान करने से अपार पुण्य की प्राप्ति बताई जाती है। सोदर में भूतेश्वर, ज्येष्ठेष्वर तथा नन्दि (तीर्थ) के दर्शन करने के बाद स्नान करने से गणाधिपत्य (गणों का अधिपति बनने) का वरदान मिलता है।[9]

सोदरनाग का वास उत्तरमानस में बताया गया है। यह उत्तरमानस हरमुख के पूर्वी ग्लेशियर में स्थित है जहां से हरमुकुटगंगा को जलराशि मिलती है। यह हरमुकुट गंगा ही उत्तरगंगा है । इसे ही गंगबल भी कहते हैं ।

सोदरतीर्थ के दक्षिण में प्रवाहित कनक-वाहिनी को कश्मीरी में क्रेंकनदी कहते हैं । यह कनकवाहिनी आगे सिन्धु में जा मिलती है । राजतरंगिणि (तरंग 1.124-30) के अनुसार श्रीनगरी में ज्येष्ठरुद्र की स्थापना पर महाराज जलौक ने वहां सोदरनाग को प्रकट होते देखा जो कि नन्दीश की उस पर कृपा के बिना संभव नहीं था । महाराज जलौक श्रीनगरी में नन्दीरुद्र के चमत्कार से अपने आप फूट निकले सोदरनाग में स्नान कर पुण्यों का फल पाते हैं। कल्हण महाराज जलौक के विषय में लिखता है (तरंग 1.130) ऐसा लगता है कि जैसे वह स्वयं नन्दीश ही धरती पर अवतरित हुए थे। श्रीनगरी का यह सोदरनाग वर्तमान सोदरबल(डल झील के पास) है । परन्तु सोदर नाग का मूलतीर्थ नारानानाग (नन्दिक्षेत्र) ही है जहां परिहासपुर (पटन) से चलकर राजतरंगिणि के इतिहासकार कल्हण ने जीवन के अंतिम वर्ष बिताये थे ।

हरमुख अथवा हरमुकुट : कश्मीर के उत्तर में लगभग 17000 फीट ऊंचा पर्वत-शिखर, जिसपर आज तक चढ़ने में कोई भी सफल नहीं हुआ बताया

जाता है । इस पर्वत का शिखर सदा मेघों से ढ़का रहता है और अपवाद स्वरूप ही इसे कभी निरभ्र देखा गया है। सन् 1988 में पर्वतारोहण के दौरान हमारा दल हरमुख की तलहटी में कालोदक के तटपर तीन-चार दिन रुका और एक दिन हमारे दल को वह अद्भुत क्षण नसीब हुआ जब हम हरमुख की चोटी को बिना बादलों के देख पाये । हमारे देखते-देखते मेघों की परतें धीरे-धीरे इस तरह खुलकर उठती गईं थी जैसे शिव के गले से लिपटे वे घने मेघों के नाग हों और नीले आकाश में थोड़ी देर के लिए लहराने लगे हों ।हम विस्मित नेत्रों से देख रहे थे हरमुख को । उसके तेज़ तिकोने शिखर को । नन्दि को मनुष्य शरीर में मृत्युंजय का वरदान देने के बाद शिव उसे अपने साथ लेकर इसी शिखर पर चढ़े थे, यहीं वह नित्य निवास करते हैं। मैं नीलमतपुराण में वर्णित इस शिखर से संबंधित मिथकीय इतिहास को स्मरण कर रहा था । पलक झपकते ही कब वह शिखर फिर से मेघाच्छन्न हो चुका था, हमें पता ही न चल पाया । मुझे याद है, हरमुख शिखर को साक्षात् देखकर मेरे मित्र कुछ निराश से हो गये थे । क्योंकि वहां मेघों के हट जाने पर उन्हें जटाधारी शिव दिखाई नहीं दिये थे । उनमें से एक ने क्षुब्ध होकर मुझसे पूछा था कि क्या नीलमत पुराण में इसका समाधान हमें मिल सकेगा कि हमें यहां कालोदक के किनारे से इस शिखर पर शिव क्यों नहीं दिखाई दिए । मुझे हंसी आई थी....नन्दीश्वरस्य या मूर्तिर्दुराचारैर्न दृश्यते । अर्थात् दुराचारी नन्दीश्वर को नहीं देख सकेंगे। उस रात घुप्प अंधेरे में अपने तंबु के सामने जलाई आग के इर्द-गिर्द बैठकर हमने देर तक बेसुरी आवाज़ों में लोकप्रिय कश्मीरी गीत गाया था :

हरम्वखें बरें तलें प्रारय मदोंनो
यी थपहम ती लागयो.....

(अर्थात् मैं हरमुख के द्वार/दरें पर बैठ तुम्हारी राह देखूंगा/देखूंगी। मेरे प्रियतम! तुम जो कहोगे मैं वही (पुष्प) चढ़ाऊंगी तुम्हें)।

इसी हरमुख से एक कश्मीरी कहावत भी जुड़ी है -'हरम्वखुक गोसोन्य' अर्थात् हरमुख का जोगी । इसकी सन्दर्भ-कथा के अनुसार एक बार

एक जोगी ने इसके शिखर पर चढ़कर मृत्यु पर विजय पाने और वहां शिव के साक्षात् दर्शन करने के लाख यत्न किये। वह दिनभर जितनी चढ़ाई चढ़ता और दूसरी सुबह अपने को वापस तलहटी में पहुंचा हुआ पाता। 'हरमुख का जोगी' हमें किसी हद तक प्रसिद्ध यूनानी मिथक सिसिफस की याद दिलाता है। सिसिफस ने मानव जाति के लिए मृत्यु को बन्दी बनाया था जिसके दंडस्वरूप उसे एक अनगढ़ चट्टान को ठेलकर गिरिश्रृंग पर ले जाना होता है। वह कभी गिरीश्रृंग पर नहीं पहुंचता। बार-बार नीचे पहुंच जाता है।

भूतेश्वर : हरमुकुट से दक्षिण-पूर्व की दिशा में खड़ा पर्वत, जिसे कश्मीरी जनमानस आज भी 'बुथ्यशेर' अथवा 'बुथ्यहेर' के नाम से पुकारता है। नन्दि को वरदान देने जाते हुए शिव ने इस पर्वत की चढ़ाई की। यह पर्वत भी नन्दिक्षेत्र में स्थित है।

सीर : वर्तमान सोपोर तहसील के अन्तर्गत यह गांव वितस्ता के तट पर बसा हुआ है। लोक विश्वास है कि नन्दीकेश्वर का जन्मस्थान यही गांव है।

सुंबल : वर्तमान सोनावारी तहसील के अंतर्गत वितस्ता के तट पर बसा प्रसिद्ध गांव। यहां नन्दीकेश्वर का जो तीर्थ है उसे नन्दीकेश्वर का राज-दरबार माना जाता है। भौगोलिक दृष्टि से इस (नन्दि तीर्थ से संपन्न) गांव के आस-पास जो जो प्रसिद्ध गांव अथवा स्थान हैं वे ऐतिहासिक, धार्मिक और सांस्कृतिक दृश्टि से महत्त्वपूर्ण हैं। जैसे अन्दरकूट (प्राचीन इंद्रकूट/अभ्यन्तरकूट; यहीं 14वीं शती में शहमीर ने विश्वासघात कर दुर्ग में कश्मीर को अंतिम हिन्दु साम्राज्ञी कोटारानी को गिरिफ्तार किया था), वासकुर (वासुकि का प्राचीन तीर्थ; यह स्थान 17वीं सदी की प्रसिद्ध कश्मीरी संत कवियत्री रूपभवानी की भी तपस्या स्थली है), सफापुर (प्राचीन सभापुर, मानसबल के किनारे पर बसा गांव। मानसबल को कश्मीर का मानसरोवर कहा जाता है), प्रयाग (वर्तमान शादीपुर; यहां वितस्ता और सिंधु का संगम है। यह कश्मीर का प्रयागराज है), वोकुर (प्राचीन उश्कर जो महाराज कनिश्क के राजकाल में बसाये दो अन्य नगरों कनिश्कपुर (वर्तमान कानिस्पोरा) और उश्कर (वर्तमान ओकुर)की तरह ही ऐतिहासिक महत्त्व का गांव है। वहां से कुछ ही दूरी पर तुलमुल है जहां

महाराजा खीरभवानी का तीर्थ है। इस तरह एक विहंगम-दृष्टि से देखने पर सुंबल के नन्दीकेश्वर तीर्थ की भौगोलिक स्थिति अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

सोनामर्ग जाते हुए कंगन क्षेत्र के अन्तर्गत भी एक गांव सुंबल नाम से प्रसिद्ध है। यह गांव नीलमतपुराण में वर्णित नन्दिक्षेत्र में स्थित है।
गोशबुग: पलहालन के पास बसे गोशबुग (सस्कृत : घोषबुघ्न) में नन्दीकेश्वर का जो तीर्थ है उसके बारे में लोक-विश्वास है कि सीर (सोपोर) से सुंबल में तप करने के लिए जाते हुए यहां नन्दि ने चिनार के नीचे बैठकर कुछ देर के लिए विश्राम किया था।

गोट्र्यूंग : ज़िला कुपवारा के अन्तर्गत इस गांव में भी नन्दीकेश्वर का अस्थापन है और पास में ही गुंडगुशी में मंगलादेवी का भी तीर्थ है जिसे कश्मीरी पंडितों के वर्तमान सामूहिक विस्थापन-वर्ष 1990 से कुछ बरस पहले ही स्थानीय मुसलमानों ने हथिया लिया था। कश्मीरी लोक- गीतों में मेंहदीरात पर वर-वधु को मेंहदी लगाते हुए नन्दीकेश्वर के साथ उनकी पत्नी मंगलादेवी का भी उल्लेख आता है। यह तीर्थ उसी मंगलादेवी का है। स्थानीय कश्मीरी पंडित दशकों से इसी तीर्थ से जन्माष्टमी के अवसर पर श्रीकृष्ण की झांकी निकालते थे।

विलगाम : यह गांव भी ज़िला कुपवारा के अन्तर्गत आता है तथा बीसवीं शताब्दी के एक विख्यात् शैव संत स्वामी आनंद जी की जन्मभूमि और नन्दीकेश्वर तीर्थ के कारण कश्मीर में प्रसिद्ध है। यहां यह कहना प्रसंग से बाहर न होगा कि स्वामी आनन्द जी का पैतृक गांव सुंबल था। यहां से उनके दादा विलगाम जाकर बस गये थे। स्वामी आनंद जी को इसीलिए सुंबल के नन्दीकेश्वर तीर्थ का अदम्य प्रेम था। वह प्रायः सुंबल और सीर के नन्दीकेश्वर तीर्थ में हर बड़े उत्सव पर पहुंचते।

ध्यातव्य है कि कश्मीर से विस्थापन के बाद वर्ष- 2004 में विलगाम के निवासियों ने जम्मू-अखनूर राजमार्ग पर पुरखू के विस्थापित-कैंप में नन्दीकेश्वर के अस्थापन का निर्माण किया। उसमें नन्दीकेश्वर तथा स्वामी आनंद जी की मूर्तियां स्थापित कीं।

बातरगामः जिला कुपवारा के इस गांव में भी नन्दीकेश्वर का प्रसिद्ध तीर्थ है। यह गांव टिकर से आगे कुछ ही दूरी पर है।

वनपुह : अनन्तनाग के समीप यह गांव भी कई संत-कवियों और नन्दिकेश्वर तीर्थ के लिए प्रसिद्ध है।

द्विगाम : वर्तमान शुपयन में द्विगाम में जो कपालमोचन तीर्थ है, उसका निर्माण नन्दि वृशभ से हुआ बताया जाता है।

नन्दीचूल : के डी मैनी[10] के मतानुसार लोरन (पुंछ) के उत्तर में लगभग आठ मील दूर स्थित नन्दीचूल नामक पवित्र प्रपात नीलमतपुराण के दिनों से विख्यात् है। नन्दि के नाम से संबंधित यह तीर्थस्वरूप झरना 7वीं शताब्दी के बूढ़ा अमरनाथ के क्षेत्र में पड़ता है जो कि लोरन के दक्षिणी सीमांत पर स्थित है।

2. कश्मीर से बाहर के कुछ भौगोलिक-सन्दर्भ

श्री चामुण्डा नन्दीकेश्वर धाम : यह कांगडा-धर्मशाला मार्ग पर स्थित तीर्थ है। यहां नन्दीकेश्वर ने एक बड़ी शिला के नीचे बैठकर तपस्या की थी। इस जगह के समीप ही भुवनेश्वरी अर्थात् श्री चामुण्डा भगवती विराजमान है।[11] शिवपुराण के अनुसार नन्दीकेश्वर नन्दितीर्थ से चलकर शिव की तपस्या करने के लिए जिस महावन को गये थे, वे नन्दितीर्थ और महावन दोनों श्रीचामुण्डा नन्दीकेश्वर क्षेत्र के अन्तर्गत आते हैं।

शरवण : इसे यौल (कांगडा-धर्मशाला मार्ग पर स्थित) के समीप का प्राचीन सरकंडों का वन माना जाता है।[12] इस स्थान पर नन्दीकेश्वर ने पुश्पक-विमान में बैठे दर्प से चूर रावण को समाधिस्थ शिव के पास जाने से रोका था। यह प्रसंग वाल्मीकि रामायण के उत्तरकाण्ड के 16 वें सर्ग में आता है। यहां नन्दीश्वर महादेव मन्दिर के उत्तर में जिस मैदान में बड़ी बड़ी शिलाएं बिखरी पड़ी मिलती हैं, लोक विश्वास है कि इसी स्थान पर प्राचीन काल में जालन्धर राक्षस और शिव के बीच चल रहे युद्ध के दौरान शिव के पार्षद नन्दीश्वर और

जालन्धर के गणाधिति कालनेमि में भी जमकर युद्ध हुआ था । इस स्थान पर बिखरी पड़ी शिलाओं को नन्दीकेश्वर द्वारा स्तम्भित वे शिलाएं मानी जाती हैं जो कालनेमि ने उन पर फेंकी थीं ।

जालन्धर पीठ : प्राचीन त्रिगर्त (वर्तमान कांगडा) में 360 तीर्थों से संपन्न जालन्धर पीठ स्थित है। नन्दीकेश्वर यहां जालन्धर पीठ के उत्तरी द्वारपाल के रूप में प्रतिष्ठित हैं ।

नन्दिपर्वत : स्वामी विकास गिरि[14] के अनुसार "नन्दी कैलास के दक्षिण भाग में सामने ही स्थित है । नन्दी परिक्रमा के लिए दो तीन दिन का समय लगता है। नन्दी का पिछला हिस्सा कैलास के साथ जुड़ा हुआ है, इस जुड़े हुए भाग को पार करने के लिए सीधे चार कि.मी. चढ़ाई करनी पड़ती है । ऊपर कैलास पर्वत में एक गुफा है जिसे सेरतुंगचुक्सुम कहते हैं । इस गुफा से आधे कि.मी. की चढ़ाई चढ़ने के बाद नन्दी और कैलास के बीच आ पहुंचते हैं।"

सन्दर्भ :

1. Bhavaninam-Sahasrastutih, Translation & commentary, J.N. Kaul 'Kamal' , Page xxiii
2. The Nilmat Puran, Vol I , A cultural and literary study, Dr. Ved Kumari , Page 25 and 40
3. Ibid. page 25
4. Rajtarangini , Translation by M.A Stein , Vol. II. P. 410
5. Nilmat Puran Vol.-I , A Cultural and Literary Study, Dr. Ved Kumari , Page 41.
6. नीलमतपुराण, श्लोक 1164-1166
7. श्री रूपभवानी रहस्योपदेश, डॉ. त्रिलोकीनाथ गंजू, पृ.15
8. नीलमतपुराण , श्लोक 1081
9. नीलमतपुराण , श्लोक 1168
10. Daily Excelsior (Jammu) , dated 26-01-2003
11. जालन्धर महात्म्य ग्रन्थ में उल्लेख है :

चामुण्डायश्च महात्म्य श्रवणात् पापनाशनम् ।
नन्दिकेश्वरस्य निकटे वर्तते भुवनेश्वरी ।।

(श्री चामुण्डा नन्दिकेश्वर का इतिहास एवं महात्म्य, पृ.27 से उद्धृत)

12. श्री चामुण्डा नन्दिकेश्वर का इतिहास एवं महात्म्य , पृ.45
13. श्री चामुण्डा नन्दिकेश्वर का इतिहास एवं महात्म्य , पृ. 46
14. सुमेरुपर्वत (कैलास मानसरोवर यात्रा), स्वामी विकास गिरि, पृ.94.

रुद्रयामल तंत्र और नन्दिकेश्वर संवाद

रुदयामल तंत्र कश्मीर में प्रचलित शाक्त-सम्प्रदाय का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसी तंत्र के अन्तर्गत परात्रिशिखा और विज्ञान-भैरव जैसे शैव एवं शाक्त- सम्प्रदाय के दो अन्य महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ भी आते हैं । तंत्र साहित्य शक्ति की सर्वापरि महत्ता को स्वीकार करता है। इस संसार में हमें जो कुछ भी दिखाई देता है अथवा जो अदीख होकर भी अस्तित्व में है वह सब शक्ति से उद्भूत है। शक्ति ही उद्गम है, स्थिति है, विस्तार है एवं विलोपन है। शिव उसीके अधीन हैं और उन्हीं की शक्ति से जगत के अनेक कार्य निश्पादित करते हैं ।

इसी रुद्रयामल तंत्र के अन्तगर्त भवानीनामसहस्र भी आता है जो कश्मीरी पंडितों में उतना ही लोकप्रिय है जितना कि दक्षिण में ललिता-सहस्रनाम। इसमें, पण्डित रघुनाथ कोकिलः[1] के शब्दों में, श्री राज-राजेश्वरी महात्रिपुर- सुन्दरी के एक हज़ार दिव्य नाम एक लड़ी में पिरोये अमूल्य मणियों की तरह हैं । इस जगत और अर्न्तजगत का रहस्य जानने वाले, भक्ति, ज्ञान, योग और तन्त्रसाधना में महासिद्ध भगवान शिव ने स्वयं इन नामों को निपुणता और कुशलता के साथ जोड़ा है कि वे विशेष शक्तिशाली मन्त्र बन गये हैं । भक्तवत्सल भगवान् शिव ने अपने परम भक्त नन्दिकेश्वर को भगवती पार्वती के यह मन्त्रात्मक नाम रहस्योद्घाटन पूर्वक बतायें।'

भवानीसहस्रनाम में निहित सृष्टि के गूढ़ रहस्य को शिव ने अपने पुत्र स्कन्ध से भी गुप्त रखा था । अपने प्रिय भक्त नन्दिकेश्वर को यह रहस्य, उसके पूछने पर, शिव ने उद्घाटित कर उनकी गरिमा बढ़ाई है । स्कन्ध की अपेक्षा नन्दिकेश्वर को यह गूढ़ रहस्य जानने के लिए योग्य पात्र के रूप में चुना जाना, उनके जिज्ञासु एवं विद्वत्तापूर्ण चारित्रिक गुण का परिचायक है। ललितासहस्रनाम (श्लोक 141, अथवा नाम संख्या 733) के अनुसार इसे नन्दि- विद्या भी कहते हैं । अर्थात् नन्दिकेश्वर दूसरा अर्जित विद्या। इस तरह नन्दिकेश्वर एक विद्यावान मनीषी के रूप में हमारे सामने आते हैं।

रुद्र यामलतंत्र शाक्त-सम्प्रदाय का ग्रन्थ होने से यह बात सिद्ध हो जाती है कि नन्दिकेश्वर एक शाक्त देवता हैं । वह शक्ति के उपासक हैं। वह उन्हीं की शक्ति से 'आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक, त्रिविधताप' दूर करते हैं ।

सन्दर्भ :

1- Preface by Pt. Raghunath Kokilah Bhavani-Nam-Sahasra-Stutih, English Trans. & Commentary by Pt. Janki Nath Kaul 'Kamal', Page xiii.

नन्दिकेश्वर के नाम और प्रशस्ति-पद

आमतौर से पुराणों एवं अन्य स्रोतों से हमें नन्दिकेश्वर के जो विभिन्न नाम उपलब्ध होते हैं उनमें नन्दि, नन्दीश और नन्दीश्वर, प्रमुख हैं। इन चारों नामों का उद्भव और विकास एक ही धातु से हुआ लगता है। उन्हें जिन विशेषणों या पदों से अलग-अलग प्रसंगों पर अभिहित किया गया है उनमें गणश्रेष्ठ[1] (गणों में श्रेष्ठ), महाभाग[2] (धर्मात्मा, सद्चरित्र), पार्षद[3] (सभासद्) द्विज[4] (ब्रह्मज्ञाता अथवा ब्राह्मण), गणाधिपति[5]/गणेश[6] (गणों के अधिपति/गणों के ईश), उत्तर दिशा के द्वारपाल[7], विश्वनाथ[8], जगत्याविभूशं[9] (जगत के विभूशण), आशुतोश[10] (शीघ्र प्रसन्न होने वाले), क्षिप्ररोष[11] (शीघ्र रुष्ट होने वाले), तपोधन[12], महाबली[13], शशिप्रभा[14], गणेश्वर[15], धर्मवित्[16], वृशरूपधरोधर्म[17], नन्दिनंजपतांवरम्[18], गणोत्तम[19], द्विजोत्तम[20] आदि प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त कश्मीरी लोकमानस में वह नन्दिकेश्वर-महाराज तथा नंदबब के पदों से भी अभिहित हैं।

सन्दर्भ :

1. भवानी नामसहस्रस्तुति, श्लोक 11
2. भवानी नामसहस्रस्तुति, श्लोक 27
3. नीलमतपुराण, श्लोक 1157
4. नीलमतपुराण, श्लोक 1154
5. नीलमतपुराण, श्लोक 1080
6. नीलमतपुराण, श्लोक 1072
7. श्री चामुण्डा नन्दिकेश्वर का इतिहास एवं महात्म्य, पृ.65

8-11- नन्दिकेश्वर स्तोत्र (श्री चामुण्डा नन्दिकेश्वर का इतिहास एवं महात्म्य) पृ. 50-54

1. नीलमत पुराण , श्लोक 1165
2. नीलमत पुराण , श्लोक 1072
3. नीलमत पुराण , श्लोक 1081

4. नीलमत पुराण , श्लोक 1078
5. नीलमत पुराण , श्लोक 1084
6. नीलमत पुराण , श्लोक 1133
7. नीलमत पुराण , श्लोक 1145
8. नीलमत पुराण , श्लोक 1076
9. नीलमत पुराण , श्लोक 1155

नन्दिकेश्वर का महात्म्य और स्तवन

देवलिंगेतथाङ्गे यं सहस्रारत्निमानतः ।
धनुशप्रमाण साहस्रं पुण्यक्षेत्रे स्वयंभुवि ।।
पुण्यक्षेत्रेस्थिता वापीकूपाद्यपुश्कराणि च ।
शिवगंगेतिविज्ञेयं शिवस्य वचनं यथा ।।
(शिव पुराण)

अर्थात् देवताओं के स्थापित लिंग के चारों ओर सहस्र अरत्नि स्थान पवित्र होता है और स्वयंभूलिंग अर्थात् जहां लिंग स्वयं प्रादुर्भूत हुआ है वहां सहस्र धनुष तक स्थान पवित्र हो जाता है (चार हाथ का एक धनुष होता है। पुण्य क्षेत्र के कुएं, बावड़ी, पुष्कर ये सब शिव-गंगा स्वरूप हैं, यह शिव का वचन है।

तत्र स्नात्वा तथा दत्त्वा जपित्वा हि शिवं व्रजेत ।

अर्थात् वहां स्नान, दान तथा जप करने से शिवत्व की प्राप्ति होती है ।

ततश्च नंदिको देवो हत्याकोटिनिवारक : ।
सर्वकामार्थदश्चैव मोक्षदो हि प्रकीर्तित : ।।
नन्दकेशं च यश्चैव पूज्येतपरयामुदा ।
नित्यं तस्याखिला सिद्धिर्भविश्यति न संशयः ।।
(शिव पुराण)

अर्थात् नन्दिकेश्वर करोड़ों हत्याओं को निवारण करने वाले हैं। सभी कामनाओं को सिद्ध करने वाले और मोक्ष देने वाले हैं। जो कोई नन्दिकेश को प्रीति से पूजता है उसकी नित्य सम्पूर्ण सिद्धि होती है । इसमें संशय नहीं ।

यह महात्म्य शिवपुराण में सूत ऋषि ने शौनक आदि ऋषियों को सुनाया है । कश्मीर मंडल में प्रचलित नन्दिकेश्वर का ध्यान-मंत्र इस प्रकार है :

नन्दी चतुर्भुजो रक्तः चतुर्वक्तः त्रिलोचनः
बीजगर्भ मुंडशूलं चिन्तयेत विघ्ननाशनम् ।
श्री पार्वती प्रियंपुत्रं परमेश्वर सेवकम् ।
भक्तरक्षाकरं चैव त्वं वंदे नन्दिकेश्वरम् ।।

अर्थात् नन्दि की चार भुजाएं हैं, उनका रक्तवर्ण है, वह परम रहस्य को जानने वाले तथा उसके व्याख्याकार होने से चतुर वक्ता हैं, तीन नेत्र होने से त्रिलोचन हैं। इस ब्रह्माण्ड के 'बीज गर्भ' हैं। मुंडशूल (अर्थात् शिलाद) के यहां प्रकट हुए हैं। जिनका स्मरण करने से विघ्नों का नाश होता है। वह श्री पार्वती के प्रिय पुत्र तथा परमेश्वर के सेवक हैं। भक्तों की हर तरह से रक्षा करने वाले नन्दिकेश्वर की मैं वंदना करता हूं।

बीज मंत्र : नन्दिकेश्वर भैरव/रुद्र का बीज-मंत्र इस प्रकार हैं:

ह्रीं श्रीं नन्दिरुद्राय नमः

नन्दिकेश्वर-पद्धति में दीक्षित भक्तों में एक परम रहस्यमय मंत्र जो श्रुति परंपरा से संत पदमानद्यद[1] से हमारे समय में पहुंचा बताया जाता है इस प्रकार है:[2]

नन्दिरुद्राय नमः
कन्दिरुद्राय नमः
तर्कराजाय नमः
पर्क राजाय नमः
मानसरोवराय नमः
श्री नन्दिकेश्वराय नमः

नन्दिरुद्राय नमः अर्थात् प्रणम्य हैं नन्दि जो रुद्र हैं जो शिव के अभिन्न रूप हैं।

कन्दिरुद्राय नमः अर्थात् प्रणम्य हैं कन्दि जो रुद्र रूप में शिव का अंश हैं। कन्दि का शाब्दिक अर्थ ग्रन्थि है जो योग से खुलती हैं। नन्दिकेश्वर घोर तप और योग-साधना में लीन परम योगी शिव की सेवार्चना करते हैं। उनके अज्ञान की सभी ग्रन्थियां शिव ने काट डाली थीं जब शिव से उन्होंने धर्म, ध्यान और समाधि का रहस्य जानना चाहा था।

तर्कराजाय नमः अर्थात् प्रणम्य है नन्दिकेश्वर जो तर्कराज हैं। तर्क शास्त्र के अप्रतिम विद्वान हैं। अपने गणों में सर्वश्रेष्ठ तर्कशास्त्री होने का वरदान उन्हें स्वयं पार्वती से मिला है। पार्वती ने पुरुष और प्रकृति के गूढ़-रहस्य नन्दिकेश्वर को बताये हैं।

पर्कराजाय नमः

अर्थात् प्रणम्य हैं नन्दिकेश्वर जो पर्कराज हैं । अर्थात् नन्दिकेश्वर आदिदैविक कलावंत हैं। रचनाकार हैं। इस रूप में वह पार्वती की परम गुह्य लीलाभूमि को उसके दिव्य रंग- रूप और तरंगों से संवारते हैं । इस रूप में शिव की दिव्य शक्ति से नन्दि ज्वाजल्यमान होते हैं । वास्तव में यह साधक की गहन आत्मानुभूति की एक अवस्था है।

मानसरोवराय नमः अर्थात् प्रणम्य है मानसरोवर जो कैलास पर स्थित है। यह नन्दि की मानसिक अवस्था का द्योतक है जो सदा शाक्त-योग में लीन रहते हैं। यह समस्त देवताओं की मानसिक शक्ति 'सत्व' का महापुंज है । सुंबल के निकट जो मानसबल है वहीं कश्मीर का मानसरोवर कहलाता है । नन्दिकेश्वर के प्रादुर्भाव से संबंधित एक कथा के अनुसार यहीं पर मानसबल में देवताओं के यज्ञ में ब्रह्मा ने मनुश्य- शरीरधारी बालक नन्दि को अपने हाथ से तिलक लगाकर उसे अमरत्व का वरदान दिया था।

श्री नन्दिकेश्वर भैरवाय नमः अर्थात् प्रणम्य हैं श्री नन्दिकेश्वर जो भैरव स्वरूप हैं । देवलोक में नन्दिकेश्वर को वही स्थान और महत्ता प्राप्त है जो ऋद्धि तथा सिद्धि देने वाले गणेश को प्राप्त है, शौर्य देने वाले कुमार को प्राप्त है, साधना-क्षेत्र में आसुरी शक्ति से साधक की रक्षा करने वाले वटुक-वामदेव को प्राप्त है । नन्दिकेश्वर भैरव में हम एक साथ इन सभी देवताओं के अंश-तत्व पाते हैं।

ऊपर्युक्त मंत्र का अर्थ पं. निरंजनाथ रैणा की उस पारंपरिक कथा के आधार पर किया गया है जो उन्होंने अपने सुपुत्र डॉ. चमनलाल रैणा को सुनाई है।

नन्दिकेश्वर स्तोत्र :

भवेशं भवेशान् मीड्यं सुरेशं
विभुं विश्वनाथम् भवानी समाद्यम् ।
शरच्चंद्र-गात्रं सुधापूर्ण नेत्रं
भजे नन्दिकेशम् दरिद्रार्तिनाशम् ।।

अर्थात्-देवादिदेव हे पार्वती-प्रिय नन्दिकेश! आप संसार के स्वामी, मोक्षदाता स्तुत्य देवेश विभु तथा दीन-दुखियों के दुःख दूर करते हैं। आपका

शरीर शरत्काल के चन्द्रमा के समान उज्ज्वल है और नेत्र अमृतधर्मा हैं। मैं आपका स्तवन करता हूं।

हिमाद्रौ निवासं स्फुरच्चंद्र-चूड़ं
विभूतिं दधानं महा नीलकण्ठम।
प्रभु दिग्भुजं शूल-टंकायुधाढ्यं
भजे नन्दिकेशम् दरिद्रार्तिनाशम्।।

अर्थात् – निर्धनों के दुखों का नाश करने वाले और कैलासवासी हे नन्दिकेश्वर! आपके माथे पर हिमालय से निकलते चमकीले चांद का मुकुट है, कण्ठ नीला है, शरीर पर विभूति है। त्रिशूल और तलवार वाली आपकी भुजाएं लंबी हैं अर्थात् आप महाबाहु हैं। मैं आपका भजन करता हूं। मेरे दुःख दूर करो।

भवेशं गजेशं प्रपन्नार्तिनाशं
विभास्वत्समुद्यत्प्रभा कान्तिपूरम्।
भवानीन्युतार्धाङ्गं शोभाभिरामं
भजे नन्दिकेशम् दरिद्रार्तिनाशम्।।

अर्थात् – संसार के स्वामी तथा गजासुर के संहारक हे शरणागत वत्सल नन्दिकेश्वर! उदित होते सूर्य की प्रभा के समान आपकी कान्ति है। पार्वती के साथ बैठे आप और भी शोभायमान हैं और दीन-दुखियों के दुःख दूर करते हैं। मैं आपका भजन करता हूं। मेरा दुःख दारिद्र्य दूर करो।

मृगांकायुत प्रक्षदीप्ति प्रकाशं
ज्वलद् वह्नि केशं शशांकार्धभालम्।
सदा भक्त-चित्ते स्फुरन्मोदरूपं
भजे नन्दिकेशं दरिद्रार्तिनाशम्।।

अर्थात् – हे प्रभु नन्दिकेश्वर! आप चन्द्रशेखर हैं। अपरिमित चंद्र प्रकाश के समान उज्ज्वल तथा चमकदार रुदाक्षमाला की कांति से प्रकाशमान हैं। दीन-दुखियों का दुख दूर करने वाले हे नंदिकेश, आप की जटाएं अग्नि के समान हैं। मैं आपका भजन करता हूं।

वराभीति-हस्तं कुठारेश पाणिं
जटाजूट गगंगोल्लसद वारिधारम्।
विशाशं महोक्षाधिरूढ़ मदारिम्
भजे नन्दिकेशं दरिद्रार्तिनाशम।।

अर्थात् –कामदेव के संहार कर्ता हे नन्दिकेश! आप अपने एक हाथ से भक्तों को वर और दूसरे से अभयदान एक साथ देते हैं । आपके हाथ में कुठार है, जटाजूट में गंगा की धारा चमकती है और नन्दि आपकी सवारी है। दोनों के नाथ और विशपायी हे प्रभो! मैं आपका भजन करता हूं ।

जगत्या विभूशं मृगेन्द्राजिनासं
शडाम्नाये-मन्त्र प्रसिद्धार्थ मूलम् ।
प्रसादादि मन्त्र स्फुरज्-ज्ञान हेतुं
भजे नन्दिकेशं दरिद्रार्तिनाशम् ।।

अर्थात् – हे भगवान नन्दिकेश! आप कल्याणकारी आशुतोश, आशुरोश, दयालु ऐश्वर्यदाता दीनों के दुख हरने वाले और सभी सिद्धियों के स्वामी हैं । आपकी जटाएं पिंगल वर्ण की हैं । मैं आपका भजन करता हूं ।

भवानी पदाम्भोज हृत्पद्म संस्थं
सुरेन्द्रादि देवैः सदा सेव्यमानम् ।
नगेन्द्रात्मजा प्राणनाथम् शरण्यं
भजे नन्दिकेशं दरिद्रार्तिनाशम् ।।

अर्थात् – दीनों के दुखों का हरण करने वाले हे शरणागत नन्दिकेश! भगवती पार्वती के चरण कमल आपके हृदय-कमल में विद्यमान रहते हैं। आप पार्वती के प्राणनाथ हैं और इन्द्रादि देव आपकी सदा सेवा करते हैं । मैं भी आपका भक्त हूं और आपका भजन करता हूं ।

भवे नन्दीशानं सकल मनुसिद्धियैक करणं
वसु-श्लोकैरेभि प्रतिदिनमति स्तौति नित्यम ।
तदैवेश-प्रीत्या निखिल सुख भागीह जगति
परं मोक्ष चान्ते परम् पदमाप्नोति सहसा ।।

अर्थात् – इस संसार में जो व्यक्ति मंत्र सिद्धि के दाता भगवान नन्दिकेश की उक्त आठ श्लोकों से प्रतिदिन नियमपूर्वक स्तुति करता है वह भगवान की प्रसन्नता से तत्काल समस्त सुखों को पाकर अन्त में मोक्षरूपी परम पद को पाता है। (श्री चामुण्डा नन्दिकेश्वर का इतिहास एवं महात्म्य से उद्धृत) ।

सन्दर्भ :

1. Manuscript :
Shri Nandikeshvara of Sumbal (from Man to Divinity) a discourse in Kashmiri by Pandit Niranjan Nath Raina, English rendering by Dr. Chaman Lal Raina ; Page 9

2. Ibid. Page 4

<u>कविता</u>

नन्दबब

– क्षमा कौल

उस दिन कहा सूर्य ने कि
उगता है उसके चिनारों के
पत्तों की आड़ में वह
और आगे बढ़ता है
मगर किसी को नहीं पता।

किसी को नहीं पता कि
"फिर मैं उसकी गीली
मिट्टी का तिलक करता हूं
होता हूं ठण्ड़ा
चमकता है चांद
काले नक्काशी–दार नम्द पर।"
और
"मेरा जासूस मन कहता कि
अथाह परिवर्तन होता है मुझमें
जब ज़रा टिकाता हूं उस
मुंडेर पर गर्दन
कुछ मुसलमान स्त्रियों की
करता हूं जासूसी।
वे दे जाती हैं भाव–अम्बार
और मैं रहता हूं खाली.....

फिर छलांग लगाकर नाग में
नहाता हूं, जलन का

करता हूं.....
फिर सुस्ताता हूं मुंडेर पर
शायद वह आलौकिक
तकिया है.....
मैं पूछूंगा नन्दबब से
कहा सूर्य ने।

कथाजपम्

(नन्दिकेश्वर भैरव से संबंधित लोगों के ऐसे प्रसंग, संस्मरण, किस्से-कहानियां जो अविश्वसनीय लगने पर भी प्रामाणिक हैं, क्योंकि सीधे अनुभव पर आधारित हैं। इस भाग में कुछ प्रतिनिधि चयन हैं।)

पं. त्रिलोक कौल का नन्दिकेश्वर

–डा० चमन लाल रैणा

सातवें दशक के उत्तरार्द्ध की बात है। एक दिन मेरे पिता पं. निरंजन नाथ रैणा शीशे के मज़बूत फ्रेम में जड़ा नन्दिकेश्वर का एक बड़ा चित्र घर ले आये। मेरे मन में जिज्ञासा जागी कि मैं इसके चित्रकार के बारे में जानूं और उनसे मिलूं। बृहद् नन्दिकेश्वर पुराण के आधार पर इस चित्रकार ने व्यष्टि से परमेष्टि बने नन्दिकेश्वर को रंगों से कैनवस पर उतारा था। यह चित्र रंगों की तरंगों से, उसकी सघन छायाओं के वैभव के साथ जीवन्त हो उठा है जो कि सच में चित्रकार पं.त्रिलोक कौल की सृजनातमक एकाग्रता का परिणाम है।

मेरी उनसे मिलने की इच्छा बलवती हुई। मैंने चाहा कि मैं उन्हें पार्वती-पुत्र नन्दिकेश्वर के दिव्य सौंदर्य से अभिभूत उन क्षणों में देखूं जबकि वे सुई-धागे के काम से कैनवस पर लगभग दो लाख यौगिक टांकों से बालक नन्दिकेश्वर को रूपाकार देने में लगे थे। मेरी उत्कट इच्छा थी कि मैं उन्हें ऐसा करते देखूं। सृजन-प्रक्रिया के उन एकांतिक क्षणों की उनकी दिव्य अनुभूतियों को जानूं। देखूं कि क्या होती है एक सृजनरत चित्रकार की मानसिक दशा, उसका गूढ़ रहस्यवाद, उसकी सादगी का सौंदर्य, उसका परम सुख, उसकी उत्तेजनाएं।

नन्दिकेश्वर का यह चित्र मनमोहक है। इसमें चित्रकार की अंतर्दृष्टि तथा चित्रित देवता के बहिरंग रूप की अनुरूपता की बड़ी सूक्ष्म

अभिव्यंजना है जीवन रस को स्पन्दित करने की चामत्कारिक योग्यता से पं.त्रिलोक कौल ने नन्दिकेश्वर के इस चित्र में दिव्य स्पन्दन की सृष्टि कर इसे परम चैतन्य से समृद्ध किया है।

नन्दिकेश्वर प्रफुल्ल कमल पर आसीन हैं जिसके अष्टदल हैं जो योग-साधना में आत्मा का प्रतीक है ।सफेद और लाल रंग के एक गोलार्द्ध से यह पंखुड़ियां उकेरी गई हैं । यह दोनो रंग सत्व और रजस की अभिव्यक्ति हैं । कौपीन और मेखला से सुसज्जित नन्दिकेश्वर सिद्ध पद्मासन में बैठे हैं । यह उनकी पवित्रता, सादगी, और उनके ब्रह्मचर्य का प्रतीक हैं। यह ध्यानस्थ नन्दिकेश्वर रक्तवर्णी हैं जैसा की उनके ध्यान में भी वर्णित है। वह तत्पर, उद्यत और सचेत भाव से शिव की इच्छाशक्ति को क्रियाशक्ति में कार्यान्वित करने की मुद्रा में हैं । इसीलिए उनके नेत्र ऩ तो उन्मीलित हैं और न ही अर्ध-उन्मीलित । वह प्राण- पण् से शिव शिवशक्ति में लीन हैं ।

शिवशक्ति से अभिशिक्त होने से उनका शरीर लाल है। यह, रक्तवर्ण शिवशक्ति की ऊर्जा है ।वह त्रिशूलधारी हैं । उनके एक हाथ में जो माला है वह शक्तिकूट, मध्यकूट तथा बाघभव- कूट की द्योतक है ।वह श्रीविद्याा और शैवदीक्षा में रत हैं । उनके एक बाएं हाथ में वज्र है । दूसरे हाथ में रक्त से भरा पात्र है जो मानवीय आकांक्षाओं का राजसिक सत है । नन्दिकेश्वर के त्रिनेत्र हैं जो प्रकाश, विमर्श और अनुभव के दायक हैं । यह कश्मीर का शैव संदर्भ है । वह जटाजूट हैं । माथे पर अर्धचंद्र है ।गले में तीन मालाएं हैं । चेहरे पर दिव्य आभा है ।

पं.त्रिलोक कौल ने नन्दिकेश्वर के शीश के पीछे अमृत प्रभामण्डल दिया है । नन्दिकेश्वर के पार्श्व में शिवलिंग है जिसे चिनार के तने के रूप में भी देखा जा सकता है ।उनकी चारों भुजाओं के पीछे चिनार की टहनियां इस तरह उकेरी गई हैं कि वे भुजाएं भी हैं, टहनियां भी और भुजाओं की प्रभा भी । पं. त्रिलोक कौल ने नन्दिकेश्वर के मुख-मण्डल को अत्यंत सावधानी के साथ ऐसा सजीव रूप दिया है जिससे अमरता का भाव हमें आच्छादित कर देता है ।

मैं पं.त्रिलोक कौल का आभारी हूं जिन्होंने कश्मीर से निर्वासित होकर जम्मू में मुझे नन्दिकेश्वर की एक फोटा-प्रति दी। मैं निर्वासन के बाद कश्मीर से अजमेर जा पहुंचा जहां मैं इस छायाकार को श्रद्धा से देखकर इससे जुड़ी बेशुमार यादों और अनुभवों से भर जाता हूं।

संदर्भ नन्दिकेश्वर : एक उपन्यास-अंश

सुधा को नंदबब वाले नाग पर, भीतर गर्भगृह में....वितस्ता की तरफ जहां जल का विस्तार शुरू होता है उस अंतिम सीढ़ी तक भी शोभा ताई दिखाई नहीं दी। इसलिए उसने ध्यान कहीं और होने के कारण नंदबब के द्वार पर औपचारिक होकर शीश नवाया और पानी-भरा मटका सिर पर धर कर वापस मुड़ गयी।

"आ गई तू। चल रख दो मटका और चाय पियो।" काकनी ने उसका मटका पकड़ कर घरवन्जे में अपने आसन पर आसीन किया और ईंडुरी पकड़ कर देखा कि वह पूरी भीगी थी।

"पूरा पानी छलकाया है। नहीं है न अकल तुम में मटका सर पर धरने की, जबकि भरा घड़ा नहीं छलकता। जानती हो नन्दबब के पानी की बूँद का अर्थ क्या है, इसका मूल्य क्या है? यह हर रोग की अकसीर दवाई है। यह अमृत है। जानती हो इसका मूल्य क्या है.....यह अमृत धार है न यहां, इसी के लिए बस नन्दबब महाराज यहां आये...यहां रूक गए और आश्रम बना लिया। इसी पानी की बूंद पर बस गया यह गांव। इसलिए इसकी एक बूंद भी कहीं नहीं छलकनी चाहिए व्यर्थ... है न ...? पर शहर में यह तमीज़ कहां से आएगी ... यह शऊर कौन देगा?... शहर का जीवन.... बरबाद जीवन होता है....एकदम व्यर्थ जीवन।" पता नहीं काकनी यह भाषण क्यों देने लगी है, सुधा ने सोचा। उसे ऐसा लगने लगा मानो तितरी और अन्य लड़कियों के समक्ष उसकी जो पोल खुल गई थी, उसकी जानकारी उसको मिल गई है। या काकनी का एक तीसरा नेत्र है जो उसके पीछे- पीछे चलता रहता है।

"अजीब रहस्य बताती है काकनी की बातें...।" वह फिर सोचने लगी और सोचने लगी कि यह जलधार आखिर आती कहां से है ? जबकि पहाड़ियां यहां से काफी मील दूर हैं। पूरा समतल मैदान है यह दूर-दूर तक .. और जमीन में से पानी की स्वच्छतम धार कहां से बन कर आती है कोई नही जानता। ग्राम भट्टों ने उस पर छत बनायी एक अर्धवृताकार और एक छोटी सी खिड़की। जिस पर लोहे की जाली मढ़ी गयी... जिसमें से उत्सुक बच्चे देखने की कोशिश करते हैं तो कुछ भी नहीं दिखता। यह नाग पूरा रहस्यलोक है....कोई नहीं जानता कहां से आता है इसमें जल। तो सुधा ने काकनी से जिज्ञासा की, "कहां से आती है यह जलधार ?"

"शंकर की जटाओं से।"
"क्या?"
"तो क्या। नन्दबब उसका इष्ट रुद्रगण है। अतः जहां वह विश्राम करें, अपनी कुटिया बनाएं...वहीं शंकर अपना जल न बरसाये ?"

सुधा चाय पीते-पीते कहीं किसी मन मस्तिष्क के एक हिस्से में सोच रही है कि शायद काकनी उसके भीतर आस्था का रोपन करने के लिए ऐसा कह रही है, इसलिए उसे यह बात समझ से परे तथा विश्वास से परे लगी थी।

कुछ दिनों बाद भाईजान ने अपने आंगन में ट्यूबवेल बनवाया था जिसका हैण्डल घुमाने से लगभग एक बार में एक-डेढ़ किलो पानी बाहर आता है। सारे गांव को राहत हो गयी थी। कपड़े धो लो, बर्तन धो लो, नहा लो, आँगनबाड़ियों को सींच लो, घर साफ कर लो...मगर जल यह पेय नहीं था। पेय जल नन्दबब के यहां से ही आता है बराबर। भाईजान ने पानी का परीक्षण भी कराया था, ट्यूबवेल के जल में सैंकड़ों कीटाणु थे, जबकि नन्दबब के जल में एक भी न था।

"यही तो रहस्य है।"
"पर शंकर कहां हैं? उसकी वे जटाएं कहां हैं? उसका वह प्रिय नन्दी कहां है?" एक दिन जब भाईजान सुधा से बातें कर रहे थे तो सुधा ने पूछा था। तो भाईजान बोले थे, "वे दिखाई नहीं देते। उनको देखने के लिए काफी तपस्या

करनी पड़ती है.....हां तेरी नानी राजरानी देख सकती है.....क्योंकि वह ज़रूर इस गांव की तपस्विनी है।"
(क्षमा कौल के उपन्यास 'दर्दपुर' से साभार)

नन्दिकेश्वर उस दिन कैसे प्रकट हुए थे ... सीर की क्षमा रैणा आज भी सोचकर हर्ष और रोमांच से भर जाती है। मां और भाई से सुनी वह घटना कितनी अद्भुत है...उस दिन मां की नींद कुछ ज़्यादा ही सवेरे खुली थी । उसे लगा वह देर से जगी है । कोई पांच, साढ़े-पांच का समय होगा, उसने सोचा। जल्दी जल्दी बेटे को जगाया।

वे सीढ़ियां उतर कर घर से बाहर आये और आँगन को पार कर नंदबब के अस्थापन की राह पर हो लिए । सब तरफ घुप्प अंधेरा था और सन्नाटा मुखर। दूर दूर तक नंदबब की ड्योढ़ी तक रास्ता सुनसान था । मां को एहसास हुआ वह नियत समय से बहुत पहले जगी है। बेटा तेज़-तेज़ डग भरने लगा और देखते ही देखते मां पीछे रह गई। बेटे ने थोड़ी दूर चलने पर पड़ोस के माधवकाख को देख लिया। वह भी नंदबब के यहां जा रहे थे। माधवकाख प्रतिदिन रात्रि के तीसरे पहर में मंदिर पर पहुंचने वाले पहले व्यक्ति होते ।

नंदबब की ड्योढ़ी के पास पहुंचते-पहुंचते माधवकाख अनायास कहां चले गये, बेटे को कुछ भी पता न चला। दांये- बांये कोई रास्ता न था... कहां चले गये...उसने विस्फारित नेत्रों से देखा। वह डर गया। वापस मुड़ा । मां के पास जाकर उसने माधवकाख के अन्तर्ध्यान होने की बात सुनाई। मां ने कोई खास गौर नहीं किया...। पता नहीं क्या देखा होगा ।

नंदबब के मंदिर में पूजा-अर्चना करके जब वे वापस लौट रहे थे तो उन्हें घर के पास सामने से अब माधवकाख आते हुए दिखाई दिये। "आज इतनी जल्दी नन्दिकेश्वर मंदिर गये थे?" उसने चकित होकर पूछा। मां समझ गई जो माधवकाख उसके बेटे के आगे-आगे चल कर अस्थापन की ड्योढ़ी के पास अदृश्य हो गया था वह साक्षात् नन्दिकेश्वर प्रकट हुए थे ।

मैंने एक दिन प्रसिद्ध पत्रकार शाम कौल से पूछा, "क्या नन्दिकेश्वर

भैरव से संबंधित आप के पास ऐसा कोई अनुभव है, जिसे मैं इस पुस्तक में दे सकूं ?"

"अरे, आप क्या कहते हैं..." वह उत्तेजित स्वर में बोले " नन्दिकेश्वर भैरव मेरे मामा हैं! "

मैं चौंका । क्या कह रहे हैं शाम कौल । मैं अपनी प्रतिक्रिया अभी तय ही कर पा रहा था कि उनकी आवाज़ आई,"कश्मीर से निर्वासन के शुरुआती वर्षों में जब जम्मू में हर कोई बेहाल था, नरक जैसी जीवन स्थितियां थीं, सरकार से सिर ढकने के लिए एक चीथड़ा तम्बू पाने के लिए लोगों को बेइज़्ज़त होकर धक्के खाने पड़ रहे थे, मैंने एक दिन बहुत निराश होकर अपनी पत्नी से कहा, हमें तो शायद ईश्वर ने भी त्याग दिया है...." शाम कौल की आवाज़ में उस वेदना की छुअन थी ।

वह बोल रहे थे, "जानते हैं उस रात मैंने सपने में सफेद पगड़ी बांधे, सफेद कुर्ते-पाजामें में एक कश्मीरी पंडित को अपने कमरे में घुसते देखा। वह कोई तेजस्वी था। उसकी उपस्थिति से मेरा कमरा चकाचौंध हो उठा था । मैंने उन्हें आदरपूर्वक कुर्सी पर बैठने को कहा । वह बैठते ही बोले, "मुझे नहीं पहचाना?.... मैं तुम्हारा मामा हूं.....मैं सुंबल का नन्दिकेश्वर हूं...तुमने हिम्मत क्यों हारी है? चिन्ता मत करो । मैं चमत्कृत था। उन्हें देर तक आवाक् देखता रह गया।"

शाम कौल सुंबल के निकट ही वितस्ता के पार सफापुर के निवासी हैं । उनकी सांस-सांस में मानसबल झील की पारदर्शी छायायें हैं। अपने पूरे परिवेश से उनका आत्मीय संबंध है। उनका यही रागात्मक पक्ष उनके लेखन की मनमोहक शैली में भी मौजूद है। शाम कौल ने इस अद्भुत स्वप्न के अलावा मुझे कई और संस्मरण सुनाये। एक बांग्ला संन्यासी सुंबल के नन्दिकेश्वर परिसर में कई वर्षों तक रहे। दिगंबर थे। ज्ञानी थे । सितार भी बजाते। लोग उन्हें सुंबलबाबा के नाम से जानने लगे थे।

शाम कौल जब सुंबलबाबा का ज़िक्र कर रहे थे, मुझे अपने पिता याद आये। बाबा के भक्त थे । कई रोचक प्रसंग सुनाते । शाम कौल मेरे पिता के

बारे में बताते हैं, "आपके पिता जानकीनाथ जी सुंबल बाबा के सबसे प्रियजनों में थे। यह सुंबल बाबा नन्दिकेश्वर के यहां से चुपचाप दस-पंद्रह दिनों के लिए अक्सर गायब होकर नारानाग चले जाते।"

मुझे याद आया, यही सुंबलबाबा नागडण्डी पहुंचकर घाटी में स्वामी अशोकानंद के नाम से प्रसिद्ध हुए। उनका सुंबल में वास, नारान नाग (प्राचीन नन्दि-तीर्थ सोदरनाग) जाना उन्हें नन्दिकेश्वर-पद्धति से जोड़ता है। सहसा मेरे मन में एक प्रश्न कौंधा। मैंने फोन पर ही शाम कौल से पूछा, "आपका मातामाल (ननिहाल) कहां है कश्मीर में?"

शाम कौल ने तत्काल जवाब दिया, "सुंबल में.....और कहां! प्रकाश भट्ट मेरे नाना थे।"

"तब ज़रूर नन्दिकेश्वर आपके मामा हैं!" मैंने हल्के मज़ाक के स्वर में शाम कौल से कहा। परंतु मैं अंदर से गंभीर था।

वनपुह के थपलू साहब को बेशुमार कश्मीरी विस्थापितों की तरह लगता है कि उनकी आत्मा वहीं घाटी में रह गई है। वह विस्थापन में अपना निर्जीव शरीर ढो रहे हैं। अपने गांव की स्मृतियों में वह कश्मीरी संत-कवि गोविंद कौल और नन्दिकेश्वर अस्थापन के इर्द-गिंद मंडराते रहते हैं। नवरेह तथा अन्य त्यौहारों पर अनन्तनाग के लोग नन्दिकेश्वर परिसर में चहकते हुए मिलते। तहरी खाने को मिलती।

वह बताते हैं, "वनपुह के नन्दिकेश्वर महाराज के ऊपर हमने कितनी बार एक छप्पर खड़ा करने की कोशिश की है... परंतु उन्होंने कभी स्वीकार ही नहीं किया। दूसरे दिन हवा से वह 'शेड' नीचे गिरा होता। फिर हमने उन्हें उनकी मर्ज़ी पर छोड़ दिया।"

वनपुह गांव के सीमांत पर जहां नन्दिकेश्वर हैं और जहां से मुसलमानों का लारन गंगीपोरा गांव शुरू होता है, थपलू साहब बताते हैं कि एक भयंकर आगज़नी में एक दिन यह लारन गंगीपोरा धू-धूकर जल उठा। यह छठे दशक की बात है। उन दिनों लारन गंगीपोरा के कुछ शरारती मुसलनाम युवक

बार-बार नन्दि की मूर्ति को उठाकर पास की कुल्या में फेंक देते। वनपुह के भट्ट युवक चुपचाप उस मूर्ति को निकालकर वापस प्रतिष्ठित करते। एक दिन फिर से नन्दिकेश्वर की प्रतिमा को कुल्या में फेंकते हुए उन्होंने कश्मीरी भट्टों की आस्था का मज़ाक उड़ाया। एक बुजुर्ग की आंखें भर आईं। देखते ही देखते लारन गंगीपोरा नन्दिकेश्वर की क्रोधाग्नि में भस्म हो गया। एक भी घर नहीं बचा। गांव भर के मुसलमानों की चीत्कार गूंज उठी। दुहाई नन्दिकेश्वर!

इस घटना के बाद कश्मीरी मुसलमान माताएं बुर्जुग नन्दिकेश्वर पर चढ़ाने के लिए दूध भेजते। मन ही मन सलाम करते।

सुविख्यात चित्रकार पं. त्रिलोक कौल अपने सृजन के उत्स को सुंबल के नन्दिकेश्वर भैरव में तलाशते हैं। कश्मीर के सन्दर्भ में पं. त्रिलोक कौल का चित्रकला में वही अप्रतिम स्थान है जो कविता में दीनानाथ नादिम का है। कला के क्षेत्र में एक अग्रणी वामपंथी संस्कृतिकर्मी के रूप में भी उनका गौरवशाली अतीत रहा है। एकबार मुंबई में जब उनसे किसी पत्रकार ने उनकी प्रेरणा के उत्स को लेकर प्रश्न किया तो पं. त्रिलोक कौल अपनी जड़ों के बारे में सोचने को मजबूर हो गये।

वह बताते हैं कि उन्होंने खुद को खंगाल डाला। वह बचपन में आठ साल तक मातामाल में रहे थे। मातामाल सुंबल में था। नाना नाथभट्ट नन्दिकेश्वर के अनुयायी थे। गीता का कश्मीरी में अनुवाद किया था जिसमें से एक-एक अध्याय वह गांव के ज़ैलदार ऋषिभट्ट सुंबली को प्रतिदिन सुनाते। सन् 1947 में पाकिस्तानी कबाइलियों ने नाथभट्ट को कुल्हाड़ी से क्षत्-विक्षत कर मकान में ज़िन्दा जला डाला था। पं.त्रिलोक कौल बताते हैं कि उनके नाना रोज़ नन्दिकेश्वर मंदिर में स्वामी अशोकानंद के पास बैठते। एकबार श्रीनगर स्थित उनके घर में वेदलाल सुंबली चले आये। बोले, "तुम मेरे भानजे हो। मुझे नन्दिकेश्वर महाराज का चित्र बनाकर दो।"

पं.त्रिलोक कौल यादों में खो जाते हैं, मैं उनके आग्रह को न टाल सका... बेमन ही कैनवस खोला। तूलिका हाथ में उठाई। और धीरे-धीरे नन्दिकेश्वर मेरे कैनवस पर उतर आया। यह तैलचित्र वेदलाल सुंबली को प्रसन्न करने के

लिए बनाया।" कहकर पं.त्रिलोक कौल उन क्षणों की मुखरता को देर तक जीते हैं। नन्दिकेश्वर के तैलचित्र बनाते-बनाते उनके अचेतन में यह मिथक इतने गहरे तक उतर चुका था कि उन्हें पता ही नहीं चल पाया कि उन्होंने कब नन्दिकेश्वर के चित्र को पच्चीस बार अलग-अलग कागज़ के शीटों पर रंगीन खडिया से बनाया। एक के बाद एक। नित नये भाव। नई भंगिमाएं। नये आयाम। यह नन्दिकेश्वर का गुरुत्वाकर्षण था। इन पच्चीस कृतियों में से जो दो श्रेष्ठ कृतियां थीं, उनमें से एक शीशे के फ्रेम में जड़कर उन्होंने सुंबल में नन्दिकेश्वर के मंदिर में रखवायी और दूसरी मेरे पिता के हमनाम जानकीनाथ सुंबली को दी। इसी जानकीनाथ सुंबली को सन् 1990 में नन्दिकेश्वर के परिसर में आतंकवादियों ने गोलियों से भून डाला।

पं. त्रिलोक कौल भाव-विभोर होकर याद करते हैं कि कैसे विलगाम (कुपवारा) के यशस्वी संत स्वामी आनन्द जी ने उन्हें एकबार बुला भेजा।

"मुझे भी नन्दिकेश्वर का ऐसा ही चित्र दो जो मैंने मंदिर में देखा है।" स्वामी जी ने पं.त्रिलोक कौल से प्रार्थना की। वह सुंबल से खीरभवानी (तुलमुल) जाने के लिए तांगे पर सवार थे। स्वामीजी ज्येष्ठ अमावस्या पर ज़रूर सुंबल आते और आगामी मंगलवार या शनिवार को 'राज़कठ' करते अथवा भेडू की बलि चढ़ाते। दूर-दूर से लोग नैवेद्य के लिए आते। इसके बाद वह महाराजा खीरभवानी जाकर वहां रुकते।

"मेरे पास घर में उस समय उन पच्चीस चित्रों में से दो और चित्र थे। मैंने उनसे कुछ मिनट प्रतीक्षा करने को कहा। मैं दौड़कर नन्दिकेश्वर का चित्र ले आया। स्वामीजी ने दोनों हाथों में उसे लेकर हर्ष के आंसू बहाये... हां-हां! ... ..यही! लेकिन इसे फ्रेम में जड़कर तुलमुल ले आओ। मैं वहीं ले लूंगा।" कहकर पं.त्रिलोक कौल चुप हो जाते हैं।

उन्होंने ऐसा ही किया और एक दिन सपत्नीक तुलमुल पहुंचकर उनके सामने प्रस्तुत हुए। स्वामीजी ने शिष्यों की भीड़ में उन्हें अपने पास बैठने को कहा। नन्दिकेश्वर का फ्रेम में जड़ा चित्र उनकी गोदी में था। उन्होंने जेब से प्रसाद- स्वरूप कुछ नोट निकालकर उन्हें दिये, जो पं.त्रिलोक

कौल औपाचारिकता और श्रद्धावश लेने से रहे । परतु स्वामीजी के आग्रह और उनके शिष्यों की भावनाओं को देखते हुए बाद में उन्होंने संकोच के साथ स्वीकार किया।

पं.त्रिलोक कौल बताते हैं, "मैंने बाहर जाकर देखा बीस रूपये थे... और मैं हैरान था कि जो चित्र मैंने स्वामी जी को भेंट-स्वरूप दिया था उसे फ्रेम में जड़वाने के भी मुझे इतने ही रुपये खर्च हुए थे ।" यह पं.त्रिलोक कौल के लिए नन्दिकेश्वर की अनन्य कृपा ही है कि उसके बाद उन्होंने सूई-धागे के काम (टेपेस्ट्री) से ऐसी दो अद्भुत कृतियां रचीं जो देखते ही बनती हैं । सूती कपड़े के कैनवस पर छह लाख रंगीन टांकों से नन्दिकेश्वर का मंत्र बुना । दो लाख रंग-बिरंगे टांकों से बीजमंत्र बालक नन्दिकेश्वर की प्रतिमा को विलक्षण रूपाकार दिया ।

इस तरह अपने मूल प्रेरणा-पुरुष की तलाश में चित्रकार पं.त्रिलोक कौल सुंबल में अपनी जड़ों को खोजते हैं, सन् 1947 के पाकिस्तानी कबाइलियों द्वारा जलाये गये माता- माल के खंडहरों, स्थानीय मुसलमान हमसायों द्वारा हथियाई ज़मीन-पुरन को दुबारा वापस पाने का अथक संघर्ष करते हैं, और खुद को नन्दिकेश्वर के मिथक में खोया हुआ पाते हैं । इसी मिथक में वह मुंबई में पूछे गये प्रश्न का उत्तर तलाशते हैं।

पं. त्रिलोक कौल एक अन्य संस्मरण सुनाते हैं। वह भाव-विभोर हैं । नन्दिकेश्वर के मिथक से अभिभूत । यह उन दिनों की बात है जब वह जड़ों की तलाश में श्रीनगर से वापस सुंबल लौट आये थे । उनकी स्मृतियों में मातामाल का जो घर था, उसका जो वास्तुशिल्प था, उन्हें नये सिरे से ठीक वैसे का वैसा निर्माण करना था । वह भी ठीक उसी जगह उसी 'पुरन' पर जो पाकिस्तानी कबाइली हमले के बाद मुसलमान हमसायों ने हथिया रखी थी । इस स्थान की पुनः प्राप्ति के संघर्ष में उन्होंने किसी को सरकारी नौकरी का लोभ दिया और ज़मीन का कुछ भाग कब्ज़े में ले लिया । किसी को पैसे दिये और ज़मीन छुड़ाई।

इसी क्रम में गांव के एक बुजुर्ग मुसलमान अम्-बाब को उन्होंने नन्दिकेश्वर मंदिर के आँगन में गिराने को कहा । अब उसके पास से त्रिलोक

कौल को अपने जड़ों की शेष ज़मीन छुड़ानी थी ।

"तुम 420 हो, मुझे लगता है!" बुजुर्ग अम्-बाब ने कहकर पं. त्रिलोक कौल को चौंका दिया ।

"आप यह क्या कह रहे हैं चाचा!" पं.त्रिलोक कौल ने आश्चर्य प्रकट किया । अम्-बाब ने छूटते ही उसी भाव से कहा, "मुझे लगता है तुम हमसे यह ज़मीन इसलिए छुडा रहे हो ताकि कल को प्लॉट-बंदी करके तुम इसे बेच खाओगे ।"

पं.त्रिलोक कौल का मन किया कि वह उससे कह दे कि वह क्या उसकी ज़मीन का मामा लगता है। वह जो चाहे करे, उसकी मर्ज़ी । परंतु उसने प्रकट में कहा, "ऐसा नहीं है अम् चाचा!"

अम्-बाब ने पं.त्रिलोक कौल को एक बार गौर से देखा, फिर बोला, "अगर ऐसा नहीं है तो मैंने तुम्हारी ज़मीन लौटा दी समझो। यह नन्दिकेश्वर के दरबार में कह रहा हूं ।" पं. त्रिलोक कौल दंग रह गये ।

गोशबुग के नन्दिकेश्वर तीर्थ से मूर्ति गायब थी। मेरे मामा मक्खन लाल राज़दान यह घटना इस तरह बयान करते हैं मानों हाल ही की बात हो । सन् 1947 के पाकिस्तानी कबाइली हमले से कुछ बरस पहले गांव के एक शरारती मुसलमान ने नन्दिकेश्वर के अस्थापन से उसकी मुख्य प्रतिमा उठाकर अपनी गोशाला के भीतर ज़मीन में छिपाई थी । गांव के सभी भट्ट परेशान थे । आहत थे ।

यह उनकी आस्था के साथ जानबूझकर किया गया खिलवाड़ था। बहुत दौड़-धूप को भट्टों ने । पर नन्दिकेश्वर नदारद। उधर उस गोशाला की ज़मीन में दबे नन्दि ने धीरे-धीरे उसकी चूलें हिलां डालना शुरू किया। हर रोज़ गोशाला में एक-एक पशु काल-कवलित होने लगा। उसकी हर सुबह मातम में बदल जाती।

वह पीरों - फकीरों के पास गया । एक फकीर के पूछने पर उसने अपना अपराध स्वीकार किया । वह तत्काल नन्दिकेश्वर की मूर्ति वापस ले

आया और भट्टों से क्षमा-याचना की। बरसों बाद ऐसी ही दो और घटनाएं घटीं। मामा ने विस्तार से बताया। एक उद्दण्ड मुसलमान स्त्री ने नन्दिकेश्वर अस्थापन में घुसकर पवित्र चिनार के नीचे बैठकर पेशाब कर डाला। घर पहुंचते ही वह बुखार से तप गई। बुखार उतरा नहीं। डाक्टरों ने कुछ दिनों के बाद उसे विक्षिप्त घोषित कर डाला। उसे रोज़ सपने में कोई डराता। उसके घरवालों ने भट्टों की बहुत अनुनय-विनय की। नन्दिकेश्वर को 'राज़कठ' का वचन दिया। तब जाकर वह कहीं ठीक हुई।

परंतु राधाकृष्ण....उसके तो नन्दिकेश्वर ने पंद्रह दिनों में ही प्राण-पखेरू उड़ा दिये। उस पर नन्दिकेश्वर के अस्तित्व को न मानने का जुनून सवार हो गया था। उसने गांव के सभी भट्टों को, यहां तक कि अपने परिवार के सदस्यों को भी, क्षोभ से भर दिया। उनकी धार्मिक भावनाओं को आहत किया। अपनी कीचड़ सनी चप्पल से उसने नन्दिकेश्वर की प्रतिमां को दूषित किया था। घर पहुंचा। पहले बीमार हुआ और फिर पागल। दस-पंद्रह दिन के बाद ही पाकिस्तानी कबाइलियों ने उसे चंदरहामा गांव में मार डाला।

सीर के द्वारकानाथ रैणा को नन्दिकेश्वर अस्थापन के वे सुहावने दिन आज भी याद हैं जब प्रतिवर्ष स्वामी अमरनाथ की यात्रा पर कश्मीर आने वाले जोगियों-संन्यासियों का एक बड़ा जत्था पहले सीर आकर रुकता। नन्दिकेश्वर के दस कनाल के अहाते में घने चिनारों के नीचे धूनी रमाते, चरस पीते संन्यासियों की चहल-पहल होती।

गांव के सभी घरों से बारी-बारी से साधुओं के लिए भोजन ले जाया जाता। गांव के सभी बच्चे दिनभर नन्दिकेश्वर के अहाते में बिन्दास खेलते-कूदते, मस्ती करते। सीर के इस तीर्थ पर प्रायः आने वाले अनेक संतों के नाम उन्हें आज भी याद हैं: स्वामी योगानन्द, स्वामी सेवाराम गिरि, स्वामी नीलकंठ, स्वामी राम जी, स्वामी माधवानंद, स्वामी कृष्णानंद आदि।

उन्हें पाकिस्तानी कबाइली हमले की त्रासद स्मृतियां आज भी बार बार कोंचती रहती हैं। वह तब अट्ठारह बरस के थे। अभी कबाइली गांव में पहुंचे भी नहीं थे कि गांव के एक सलाम खान ने नन्दिकेश्वर के मंदिर को आग

लगा दी। मंदिर का घंटा, थालजियां, शंख दूर ले जाकर कहीं कीचड में फेंक दीं। वह इस घटना के कुछ दिनों के बाद ही अपने मकान की छत से गिरकर मर गया। उसके घर वालों ने नन्दिकेश्वर का त्रास खाकर गांव के भट्टों को वो जगह बता दी जहां घंटा, थालजियां और शंख सलाम छान ने फेंक दिये थे। घर में एक के बाद एक कई लोग कुछ दिनों में ही चल बसे थे।

द्वारकानाथ रैणा याद करते हैं कि कैसे पाकिस्तानी कबाइलियों ने सीर गांव में घुसकर हुड़दंग मचाया था। सभी भट्टों को मंदिर के पास ही एक बड़े चिनार के नीचे जमाकर उन्हें संग्रामा तक उनके साथ गुलामों की तरह चलने का आदेश दिया था। श्रीनगर-बारामुला राजमार्ग पर स्थित संग्रामा सीर से तीन चार किलोमीटर दूर था। यहां से एक रास्ता सोपोर को जाता था।

पता नहीं क्या होने जा रहा था। मन में पक्का विश्वास भी था कि नंदबब हमारी रक्षा अवश्य करेंगे। इतने में किसी ने आकर कबाइली दल को आगे बढ़ने से सावधान कर हमें मौत के मुंह में जाने से बचाया। संग्रामा और पलहालन के बीच में बुलगाम के पास तमाम सिख बाल खोलकर हाथों में तलवारें लिए कबाइलियों का मुकाबला करने पर तुल गये थे। यह खबर सुनकर कबाइली भाग खड़े हुए और सीर के भट्ट उनके चंगुल से रिहा हो गये। वापसी पर गांव उनके घर धू-धू कर जल रहे थे, जिनमें से तीन चार घरों को सबों ने पूरी शक्ति लगाकर जलने से बचा लिया था। बहुत दिनों तक पूरे गांव के भट्टों ने मिलकर उनमें गुज़ारा किया।

"नन्दिकेश्वर अस्थापन की ज़मीन पर हमने बहुत पहले सफेदे बाये थे..." द्वारकानाथ रैण फिर यादों में उतरते हैं। उनकी झुर्रियों में धार्मिक भावनाओं की आहत खामोशी मुखर है। मानो मचलकर कहना चाहती हों, "कश्मीर से बाहर दुनिया को क्या पता कि मुस्लिम साम्प्रदायिकता क्या होती है .....कैसे दबकर चुपचाप जिए हैं कश्मीरी भट्ट"। वह कहते हैं, "बड़े हो गये थे...आकाश से बातें करने लगते थे। एक दिन गांव के हबीब हज्जाम ने गुंडई की। भट्टों की परवाह न करते हुए उसने सभी सफेदे कटवाये.....एक अन्य मुसलमान को बेचे। गांव में उसकी लकड़ी चीरने की मशीन थी .....आरा चौपाल था। हमारा विरोध बेमाना सिद्ध हुआ।"

"..........."

यह अवाक् रहने वाली स्थिति है । वह आगे बताते हैं, " आप विश्वास करिए....या सीर के किसी भी बुजुर्ग से पूछकर इस बात की पुष्टि करिए । मशीनवाले से लकड़ी चिरी न जा सकी । उसका आरा एक नहीं, कई बार टूटा ।.... उसने एक सपना देखा । कोई भयानक व्यक्ति हाथ के कुल्हाड़ी लिए उसके पीछे दौड़ा आया । उसकी छाती पर पांव रखकर बोला, अगर इस लकडी के बदले इसकी कीमत नहीं चुकाओगे, तो मैं तुम्हारी बलि लूंगा।" कहकर द्वारकानाथ रैणा थोड़ी देर के लिए फिर चुप हो जाते हैं ।

"............"

" वह दूसरे ही दिन नन्दिकेश्वर अस्थापन पर भागा चला आया। क्षमा याचना की । रुपये -पैसे देकर तौबा की । उसी रोज़ हबीब हज्जाम को गंभीर हालत में अस्पताल ले गये। कई दिनों तक उसकी नाजुक स्थिति बनी रही । उसके करीबी रिश्तेदार, पडोसी मांफी मांगने आये...."

"............."

" माफ करने वाले हम कौन थे!.....हां, बाद में हबीब हज्जाम के घरवालों ने हांडी में तहरी का प्रसाद बनाकर नंदबब की ड्योढ़ी पर गांव के बच्चों में बांटी । हबीब हज्जाम की गुंडई मिट्टी में मिल गई थी । वह जीवन भर पक्षापात का शिकार बना रहा ।"

सन् 1986 में कश्मीरी भट्टों पर अनन्तनाग ज़िले में हुए साम्प्रदायिक हमलों के दिन थे। वनपुह, दनव, गौतमनाग, लोकभवन आदि अनेक गांवों में मंदिर, धर्मशालाएं, तीर्थ चुन चुनकर ढ़हाये जा चुके थे। स्त्रियों, बच्चों की जान पर बन आई थी। जमाइतियों और दूसरे कट्टरपंथियों के दंगाइयों की चांदी थी । अनिश्चितताओं, आशंकाओं के उस वातावरण में एक दिन सीर के भट्टों पर भी आसमान टूटने की नौबत आ चुकी थी ।

सीर के लोगों को याद है कि किस तरह अचानक संग्रामा, प्यठसीर तथा दूसरे आस-पास के गांवों के कुछ जुनूनी मुस्लिम युवक उनपर टूट पड़ने के लिए आक्रामक मुद्रा में अग्रसर थे । उन्हें नन्दिकेश्वर अस्थापन क्षतिग्रस्त करना था। भट्टों के घरों में घुसकर ऐसे अवसर पर दंगाई जो करते हैं करना था । भट्टों के प्राण सूख गये थे । बहू-बेटियों का प्रश्न था ।

सीर के लोगों के लिए आज भी यह पहेली बनी हुई है कि नन्दिकेश्वर अस्थापन की ड्योढ़ी के नज़दीक पहुंचकर दंगाइयों की भीड़ क्यों रुकी और आगे बढ़ने का विचार छोड़कर उन्हें एकाएक वापस मुड़कर चले जाने का कैसे विचार आया। हालांकि बाद में जो खबर मिली थी भट्टों को उसके अनुसार नंदबब की ड्योढ़ी के पास दंगाइयों को हवा में बांहें फैलाये एक विकराल आकृति दिखाई दी थी। सीर के लोगों का विश्वास है कि यह स्वयं दीन-हीनों के रक्षक नन्दिकेश्वर भैरव थे।

सुंबल के वयोवृद्ध महेश्वरनाथ सुंबली बताते हैं कि सन् 1947 में जब पाकिस्तानी कबाइली नन्दिकेश्वर मंदिर को तोड़ने के लिए आगे बढ़े तो एकाएक चिनार से उतर कर एक विकराल नाग शिवलिंग के ऊपर कुंडली मारकर फुफकारने लगा। कबाइली रुक कर वापस मुडे। जाते-जाते उन्होंने धर्मशाला की छत पर मिट्टी का तेल छिड़का। उसे तीली दिखाई। वे यह देखकर डर गये कि उनके सामने मिट्टी का तेल तो जल गया; धर्मशाला ने आग नहीं पकड़ी। पूरी इमारत देवदार लकड़ी की थी।इसी दिन कश्मीर पहुंची भारतीय सेना के हाथों सभी पाकिस्तानी कबाइली शालटेंग के पास मारे गये थे।

महेश्वरनाथ सुंबली के मानस-पटल पर एक और स्मृति कौंधती है। ऋषि भट्ट नन्दिकेश्वर महाराज के अनन्य भक्त थे। हैसियत से ज़ैलदार। दूर-दूर तक नाम था। धन-दौलत थी। घर में ठाकुरद्वारा था। घंटों पूजा करते। चेहरे पर आध्यात्मिक तेज था। लोग श्रद्धावश उन्हें साक्षात नन्दिकेश्वर ही मानते। एक बार वह नाव में बैठकर श्रीनगर जा रहे थे। शादीपुर के पास उन्हें बड़गांव के कुछ कुख्यात चोरों ने देख लिया।

ये चोर बड़गांव से चलकर इस इलाके में कहीं सेंध मारने के मिशन पर थे। वे वितस्ता के घाट की सीढ़ियों पर से एकदम खड़े हुए। उन्होंने ऋषिभट्ट को सलाम कही। उनका हालचाल पूछा। ऋषिभट्ट की नौका जब आगे बढ़ी तो चोरों को सुंबल जाकर ऋषिभट्ट के घर हाथ मारने की सूझी। बढ़िया मौका था। ऋषिभट्ट घर में नहीं था और सीधे उनके कमरे में युक्ति से घुसकर वे धन्य हो जाते।

वे शाम को ऋषिभट्ट के कमरे की खिड़की धीरे से तोड़ने में सफल हुए । भीतर ऋषिभट्ट पालथी मारकर पूजा कर रहे थे । वे चुपचाप पीछे हट गये । देर रात में जबकि समूचा सुंबल गांव सो रहा था , वे फिर आये । सीढ़ी लगाकर खिड़की तक चढ़े । ऋषिभट्ट अभी भी पालथी मारकर बैठे पूजा में लीन थे । कमरे में दिया जल रहा था । कपूर और धूप की गंध बाहर आ रही थी। चोर वापस चले आये । दूसरे दिन श्रीनगर लौटते हुए मुजगुंड के पास उस समय उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा । सामने से तांगे में ऋषिभट्ट वापस लौट रहे थे । चोरों ने हाथ जोड़कर उन्हें सलाम कही और सारा वृतांत कह सुनाया।

ऋषिभट्ट वात्सल्य भाव से हंस दिये । उन्होंने चोरों से कहा कि वह तो रात श्रीनगर में गुज़ार कर लौट रहे हैं । वह तो साक्षात् नन्दिकेश्वर महाराज थे. ...चोरों ने कान पकड़ लिये ।

एक दिन स्वामी आनंद जी ने अचानक अपनी समाधि तोड़कर नन्दिकेश्वर अस्थापन के परिसर में ढूंढ़ती नज़रों से दांये-बांये देखा । आस-पास भक्तों की भीड़ थी । उन्होंने जानकीनाथ, शंभुनाथ और महेश्वरनाथ को तुरंत बुला भेजा । महेश्वरनाथ बताते हैं कि स्वामी जी ने उन्हें बताया, "मेरे ध्यान में सफेद पोशाक पहने एक दिव्य-पुरूष ने मुझसे कहा.... मेरा भोग कहां है...तहरी और च़रवन (कलेजी) का भोग....." इसके साथ ही स्वामी आनंदजी ने उन्हें दूसरे दिन ऐसा करने का आदेश दिया ।

सीर के डॉ. बिहारी लाल रैणा छब्बूसिंह के बारे में रोचक संस्मरण सुनाते हैं । छब्बूसिंह बारामुला के पास सिंहपोरा का निवासी था और मृत्यु-पर्यन्त हर वर्ष ज्येष्ठ-अमावस्या पर सीर पहुंच जाता । श्रद्धा से हलवा तैयार कर तीर्थ यात्रियों को खिलाता। पाकिस्तानी कबाइली-हमले के दौरान वह सीर के भट्टों के पास भाग आया था । बालक था । भट्टों ने उसे नन्दिकेश्वर अस्थापन में देवी-नाग में छिपाकर रखने का निश्चय किया । पाकिस्तानी कबाइलियों के लिए बारामुला का हर सिख 'बालवाला काफिर' था। सिख लड़के के रूप में उसकी पहचान खतरनाक साबित हो सकती थी।

उन्होंने उसके केश काट दिये। उस बच्चे को कई दिनों तक नन्दिकेश्वर

के देवी-नाग में शरण मिली । गांव के हिन्दु स्वयं परेशान थे । छब्बूसिंह इस स्थान के प्रति सदा कृतज्ञता प्रकट करता । उसे नन्दिकेश्वर से जीवन-दान मिला था, ऐसा उसका विश्वास था।

डॉ.बिहारी लाल रैणा बताते हैं कि गांव का एक कट्टरपंथी मौलवी खुलेआम नन्दिकेश्वर के प्रति सीर के भट्टों की धार्मिक भावनाओं का उपहास उड़ाता। वह जानबूझकर घर की जूठन, खासकर अंडों के छिलके इत्यादि नंदबब के घाट पर लाकर फेंक देता । डॉ. बिहारी लाल सहित सीर के कई युवकों ने उसे अनेक बार टोका था । वह उद्दण्ड किस्म का व्यक्ति था। नन्दिकेश्वर अस्थापन की डयोढ़ी के सामने ज़मीन खरीदकर उसने मकान बनाया था। एक दिन उसकी उपस्थिति में उसका बेटा नन्दबब के घाट पर नहाने के लिए उतरा। नदी में कुछ दूर तैरने पर वह सहसा एक भँवर में फंस गया। वह सहायता के लिए चिल्लाया। कोई उसे बचाने की हिम्मत न कर सका। उद्दण्ड मौलवी छाती पीटने लगा। हाथ जोड़ कर उपास्थित लोगों से प्रार्थना करने लगा कि कोई नदी में कूदकर उसके बेटे को बचाए। अन्ततः वह नन्दिकेश्वर मंदिर की तरफ मुड़कर दहाड़े मारने लगा, "हे नंदबबाऽऽ! ....मेरे बेटे को बचा.....मेरे गुनाह माफ कर दे.... रहम कर मेरे आका....मैं तुम्हारा गुनाहगार हूं।"

पलक झपकते ही हवा के एक ज़ोरदार धक्के से उसका भंवर में फंसा बेटा नदी के किनारे आ लगा । उसका बेटा मौत के मुंह से वापस मिल गया था । सही सलामत। खुशी से उसकी आंखें भर आईं । नन्दिकेश्वर की तरफ मुड़कर बार-बार हाथ जोड़कर आभार व्यक्त करता रहा ।

डॉ. बिहारी लाल रैणा के अनुसार सीर का नन्दिकेश्वर जाग्रत देवता है । आप सच्चे मन से जो मांगेंगे, प्राप्त होगा । बताते हैं कि एकबार गांव की एक स्त्री अपनी नई-नवेली ब्याहता बेटी के साथ नन्दिकेश्वर के मंदिर में आई । बेटी मायके आई हुई थी। डॉ.बिहारी लाल की मां ने उसे देखकर नन्दिकेश्वर महाराज के सामने दोनों हाथ उठाकर प्रेमवश उसकी बेटी के लिए आशीर्वाद मांगा कि अगले वर्ष तक वह एक सुन्दर बालक की मां बने । पता नहीं उसकी मां को क्या हुआ । उसने तुरंत 'नहीं-नहीं...अभी नहीं' कहा । वह बताते हैं कि गांव की वह बेटी उम्रभर निःसंतान ही रही।

नन्दिकेश्वर भैरव के किसी भी अस्थापन पर, विशेषकर सुंबल और सीर में, जो भी कोई भक्त-परिवार तहरी-च़रवन का भोग लेकर आता है, वे गांव के हरेक घर में जाकर प्रसाद के लिए मंदिर पहुंचने का न्योता देते हैं। ऐसे में गांव भर के बच्चों की उत्साही भीड़ जुटती। यों भी प्रेम से सुंबल और सीर के लोगों को दूसरे इलाकों के लोग 'ताहरि-फकीर' कहकर चिढ़ाते हैं। मज़े की बात यह कि इन दोनों गांवों के लोग तहरी खाने वाले फकीर कहलाकर नाराज़ नहीं होते। गौरवान्वित महसूस करते हैं। उनकी आंखों में एक चमक दौड़ जाती है। ये 'ताहरि फकीर' अगर किसी कारण नाराज़ हुए या तहरी और च़रवन (कलेजी) का प्रसाद देने में अगर आपने कोई कोताही की तो पक्का मानकर चलें कि नन्दिकेश्वर भैरव ने आपका प्रसाद स्वीकार नहीं किया। आपको एक बार फिर श्रद्धा के साथ पर्याप्त तहरी और च़रवन का प्रसाद लाकर नन्दिकेश्वर के इन बाल-भैरवों को राज़ी करना है। इस तरह के बेशुमार किस्से और प्रसंग सुंबल और सीर में सुनने को मिलते हैं।

सीर के नन्दिकेश्वर भैरव को पीली तहरी पसंद नहीं। यहां दरअसल तहरी में हल्दी डालने पर मनाही है। बाकी सभी स्थानों पर हल्दी का प्रयोग होता है। डॉ. बिहारी लाल एक संस्मरण सुनाते हैं। एक बार एक महात्मा अपने शिष्यों के साथ सीर आये। हवन किया। तहरी बनाई। च़रवन बनाया। परंतु तहरी में अज्ञानवश हल्दी डाली। नदी के मार्ग से उन्हें सोपोर से आगे वुल्लर झील को पार कर संभवतः बांडीपुर जाना था। वुल्लर में लहरें उठीं। महात्मा की नौका हिचकोले खाने लगी। पानी बराबर तीव्रगति से डोलता रहा। बीच वुल्लर में उंची लहरें अपना सहस्रमुखी फ़न उठा रही थीं।

महात्मा की नौका भयंकर रूप से हिचकौले खाने लगी। ऐसा क्षण आया जब नौका के उलट जाने की तीव्र आशंका होने लगी। तब कहते हैं कि महात्मा ने नन्दिकेश्वर भैरव का ध्यान किया। उसे अपनी भूल का एहसास हुआ। उसने अपने शिष्यों को तत्काल नौका वापस घुमाने को कहा। वे शाम को फिर वापस सीर आये थे और दूसरे दिन फिर से तहरी बनी। इस बार उसमें हल्दी नहीं मिलाई गई थी।

ऐसी ही एक घटना सीर की इंदिरावती को भी याद है। एक भट्ट

परिवार सीर आया था। सोपोर से। नन्दिकेश्वर महाराज ने उनकी कोई मन्नत पूरी की थी। खूब तहरी और चरवन का प्रसाद लेकर आये थे । तहरी में हल्दी-डली थी । जब प्रसाद लेने के लिए गांव भर से उमड़ आये बच्चों ने पीली तहरी देखी तो वे पीछे हट गये । किसी भी बच्चे ने तहरी न ली। वे सिर हिलाकर पीछे हटते गये ।

वे लोग हैरान हो गये। किसी बड़े ने भी तहरी स्वीकार न की । उन्होंने अंततः पीली तहरी आपस में बांट खाई। शेष तहरी से भरे पतीले एक पेड़ के नीचे खाली किये। आस पास के पेड़ों से एक भी चिड़िया नहीं उतरी। कोई कौवा नहीं उतरा, मैना नहीं उतरी । इससे बड़ा विस्मय और क्या हो सकता था!...आम तौर पर नन्दिकेश्वर अस्थापन के चिनारों, सफेदों, कीकरों के झुरमुट में चहचहाते पंछी, धर्मशाला की छत, मंदिर के कलश पर बैठे पंछी तहरी देखते ही हर्षोल्लास के साथ दर्जनों की संख्या में चीं-चीं... क्रें-क्रें...चिरिव-चिरिव कर उतरते। उनके कलरव से आस-पड़ोस के कुत्ते भी चौकन्ने होकर दौड़ आते । पंछी घबराकर उड़ जाते और पेडों की टहनियों से कुत्तों को कोसते । कुत्ते तहरी और चरवन चफ्-चफ्-चफ् खा जाते और कभी लोभवश आपस में एक दूसरे पर गुर्राते।

परंतु आज पेड़ के नीचे पीली तहरी का ढेर था। चरवन था...और कोई भी पंछी उतर नहीं रहा था। कलरव खूब गूंज रहा था। मानो सभी पंछी एक दूसरे को हिदायतें दे रहे थे, नहीं उतरना....नहीं ललचाना...हम पीली तहरी नहीं खायेंगे...नहीं-नहीं...क्रें-क्रें...चीं-चीं-चीं...चिरिव-चिरिव... क्रें -क्रें । कोई कुत्ता नहीं आया । तहरी उस पेड़ के नीचे हफ्तों पड़ी रहीं। सूख गई । उसपर धूल चढ़ी । उसके आस-पास घास उगी। ...इस तरह सब की नज़रों से ओझल हुई ।

सीर का ही एक लड़का था वह भी । नाम था रजब । जुनूनी था। बदज़ुबान भी। डॉ. बिहारी लाल बताते हैं...एक दिन मंदिर में चोरी से घुसकर उसने शिवलिंग उठाकर वितस्ता में फेंक दिया । सभी भट्टों को आघात लगा । खूब तलाश किया । पुलिस में रिर्पोट लिखवाई । रजब घर पहुंचकर बीमार रहने लगा । कुछ दिनों के बाद उसे पागल घोषित किया गया। डाक्टरों

ने इलाज किया। वह विक्षिप्तों की तरह गांव में फटेहाल घूमता। फिर नन्दिकेश्वर अस्थापन के आस-पास मंडराने लगा। वह ज़ोर-ज़ोर से कश्मीरी संत कवि कृष्णजू राज़दान की प्रसिद्ध लीला का मुखड़ा गाता फिरता :

ब्यल तय् मादल व्यन् गुलाब -
पम्पोश दस्तय्
पूज़ायि लागस परम शिवस-
शिवनाथस्तय्।

(मैं परमशिव शिवनाथ को बेलपत्र, मादल, वेन् और गुलाब चढ़ाकर उसकी पूजा करूंगा।) यह क्रम बहुत दिनों तक चलता रहा। एक दिन उसके कुछ दोस्तों ने उसके मां-बाप को रजब की करतूत के बारे में बताया। रजब के मां-बाप ग्लानि से ग्रस्त हुए। उन्होंने गांव के भट्टों से माफी मांगी । इस तरह शिवलिंग नदी से निकाला गया । रजब बहुत दिनों के बाद स्वास्थ हो गया था।

प्रश्न था मंदिर के चिनार की वे विशाल टहनियां काटने का जो ऊंचाई से बल खाकर नदी के पानी को छूने लगी थीं । सैंकडों वर्ष पुराने चिनार की घनी छाया वितस्ता के तटबंध और पानी पर देर तक रहती। यह सुंबल के नन्दिकेश्वर-अस्थापन की बात है । इंजीनियरों तथा दूसरे भू-वैज्ञानिकों व आम जनता की नज़रों में चिनार की बड़ी-बड़ी टहनियों का नदी पर इतना ज़्यादा झुकाव दिनोंदिन खतरे से खाली न था । एक अनिष्ट की आशंका बनी रहतीं। जड़ों सहित चिनार उखड़ सकता था और मंदिर भी । मंदिर की कमेटी के सदस्यों ने चिनार की शाख- तराशी का फैसला नन्दिकेश्वर भैरव पर ही छोडा । कागज की दो अलग-अलग पर्चियों पर 'हां' और 'ना' लिखकर उनमें से एक पर्ची चुनी जानी थी । एक अबोध बालक से ऐसा करने को कहा गया । नन्दिकेश्वर भैरव की स्वीकृति मिल गई थी।

अब गांव का कोई मुस्लिम लकड़हारा नन्दिकेश्वर के चिनार पर चढ़ने, फिर उसकी टहनियां काटने के लिए तैयार नहीं हुआ ।दूर-दूर के गांवों से किसी भी लकड़हारे ने मोटी रकम मिलने के बावजूद भी यह काम स्वीकार नहीं किया । अंत में सत्ताईस कि.मी. दूर जाकर श्रीनगर से एक लकड़हारा आया। उसने नन्दिकेश्वर महाराज को हाथ जोड़कर प्रणाम किया । क्षमा याचना के साथ उसने यह काम अंजाम दिया।

ऐसी ही एक घटना सीर में भी घटित हुई बताई जाती है। मंदिर निर्माण के लिए जब एक लकड़हारे से परिसर का एक चिनार कटवाने का प्रयास हुआ तो लकड़हारा यह देखकर दंग रह गया कि चिनार के तने से खून सा कोई द्रव्य निकलने लगा था। उसने चिनार काटने से इनकार किया। मंदिर कमेटी के सदस्यों ने भी क्षमा याचना की।

सीर के पं. प्रेमनाथ कौल को आज भी याद है कि कैसे श्रीनगर से आये वन-विभाग के एक उद्दण्ड 'चीफ कन्ज़र्वेटर' को नन्दिकेश्वर भैरव ने दिन में ही तारे दिखाये थे। उसका दर्प चूर किया था। मिट्टी में मिल गया था सातवें आसमान में उड़ने वाला शिवराम कौल। उसका नास्तिक होना तो उसका अधिकार था, परंतु दूसरों की आस्था का उपहास उड़ाना तिलमिला देता।

सीर सहित आस पास के गांवों और दूर-दूर तक उसका रौब था। सीर के किनारे-किनारे बहने वाली वितस्ता के उस पार दुआबगाव में उसका दफ्तर था। नन्दिकेश्वर भैरव तथा सीर के भोले भट्टों की धार्मिक भावनाओं से खिलवाड़ करना उसका नित्यकर्म था। ज़बान भी खराब थी, आदतें भी खराब। कई- कई किस्से कहानियां थीं उसको लेकर।

ऐसे में एक दिन सीर के भट्टों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। शिवराम कौल लस्त-पस्त होकर दीन-हीन भाव से नन्दिकेश्वर-प्रांगण में एक निश्चित दूरी से नंदबब से क्षमा याचना करते हुए रो रहा था। बार-बार कान छूकर माफ किये जाने की प्रार्थना कर रहा था। परंतु देवी-कुण्ड से, जो कि नंदबब के मंदिर से कुछ ही दूरी पर था, वह एक कदम भी आगे नहीं बढ़ता।

उसने सीर के भट्टों से अपने अपराधों के लिए क्षमा मांगी। वे हैरान थे। फिर उसने जिस-तिस को सपने में नन्दिकेश्वर द्वारा हड़काये जाने की बात बतायी। इसी मंदिर से एक उग्ररूप संन्यासी हाथ में फरसा लिए उसे जान से मार डालने की धमकी दे गया था। "मेरे मंदिर की देहरी को अगर कभी छुआ भी या देवीनाग से आगे एक भी कदम कभी मेरी तरफ बढ़े तो तुम्हारी बलि ले लूंगा।" नन्दिकेश्वर ने उसे धमकी दी थी।

शिवराम कौल लज्जित था । ग्लानि से भरा। उसने पश्चाताप स्वरूप नन्दिकेश्वरघाट बनवाया। भव्य धर्मशाला बनवायी।...और कभी देवीकुण्ड से आगे नहीं बढ़ा । वहीं से हाथ जोड़कर नन्दिकेश्वर के आगे शीश झुकाता ।

बात सन् 1973-74 की है । सोपोर डिग्री कॉलेज के सत्ताईस विद्यार्थियों का एक पर्वतारोही-दल छह दिन के अभियान पर कश्मीर से किश्तवाड़ के लिए रवाना हुआ । रसद-पानी व दूसरी ज़रूरी चीज़ें उनके साथ थीं । सातवें दिन किश्तवाड़ से बस में बैठकर वापस सोपोर पहुंचना तय था। ड़कसुम के बाद पर्वतारोहण शुरू होना था और पहला पर्वतीय पड़ाव खुड़न था, फिर और-और ऊपर पहुंचकर सिम्थन के उत्तंग शिखर पर से दूसरी तरफ उतरकर मुग़ल मैदान, छात्रों, ड़टपट, दछन, मडवा के जंगलों, पर्वतीय रास्तों, बीहड़ों से होते हुए किश्तवाड़ पहुंच कर वहां दो दिन का विश्राम तय था। दुर्भाग्य से यह पर्वतारोही दल पर्वतारोहण के दौरान अनायास शुरू हुई ऐसी मूसलाधार वर्षा में फंस गया कि वहां से न पीछे लौटा जा सकता था, न आगे ।

वर्षा भी कई दिनों तक गिरती रहने के मूड़ में थी। कभी घंटे भर के लिए थम जाती, फिर ऐसी झड़ी लग जाती कि लगता चीड़, देवदार और दूसरे जंगली पेड़, पौधे, झाडियां मिट्टी सहित उखड़कर लुढ़क आयेंगे। पहाड़ों की उठान फिसल कर दब जाएगी। यह वर्षा आलमगीर थी। घाटी में भी हो रही थी। नदी-नाले उफनकर तटबंधों को लीलने लग गये थे। वितस्ता का पानी पुलों की सतह तक उठ आया था। खतरे की घंटी बज चुकी थी। छह दिनों का हमारा अभियान किसी एक ही अज्ञात जगह पर बैठकर जम गया था।

लड़कों के अभिभावक रोज़-रोज़ कॉलेज के प्रिन्सिपल से मिलने जाते। प्रिन्सिपल पुलिस कंट्रोल रूम से सम्पर्क कर बच्चों के बारे में जानकारी मांगते । टेलिफोन लाइनें टूट चुकीं थीं । रेडियो-सम्पर्क कट चुका था। संबंधित सरकारी एजेंसियों ने लगातार अपने स्रोतों से हमारा हाल जानना चाहा होगा। परंतु कहां...!

वर्षा थमने का नाम ही न ले । हमारा चावल-आटा, आलू-प्याज, चीनी-नमक, बिस्कुट...सब खत्म हो चुका था। या भीगकर नष्ट हुआ था। रुपये-पैसे थे, परंतु किसी काम के नहीं। पता नहीं किस पड़ाव पर पहुंच एक

बकरवाल के खेत में आलू खोजकर हमें जैसे हीरे मोतियों का खज़ाना मिल गया था। भून कर और उबाल-उबाल कर हमने बेशुमार आलू खाये थे। रोम-रोम से आलुओं की गंध फूटती।

वर्षा का कोप अब कम हो गया था। परंतु बूंदा-बांदी जारी रही। पता नहीं वह कौन सा पड़ाव था जहां सुरक्षाबलों की एक चौकी थी। हमें टोहने के आदेश शायद उन्हें भी पहुंच चुके थे। इसीलिए हमें देखकर खुश हुए थे । उन्होंने वायरलैस पर हमारे सही सलामत होने की सूचना आगे दे दी थी। हम धीरे धीरे कई दिनों के बाद किश्तवाड़ पहुंचे थे। फिर बस से वापस सोपोर।

हमें सकुशल वापस पहुंचा देखकर किसी को विश्वास नहीं हो रहा था। खुशी के आंसुओं से सभी की आंखें नम थीं। सब के मां-बाप ने किसी न किसी पीर-फकीर का दामन पकड़ा था। मंदिरों, मस्जिदों में प्रार्थनाएं की थीं, दुआएं मांगी थीं। मेरी मां 'अम्मा जी' ने मुझे बताया, "जब एक दिन हम निराश होकर पूरी तरह से बेबस हो गये थे, तो तेरे पिता बिना किसी को बताये सीर जाकर नन्दिकेश्वर भैरव के सामने रोये । ज़मीन पर लोट-लोट गये। और उसी शाम रेडियो ने सूचना दी कि तुम लोग सकुशल हो।"

मुझे वो पहाड़ी चौकी याद आई जहां हमें देखकर सुरक्षाबलों के जवानों ने वायरलैस से हमारी खबर आगे किसी को दी थी ....।

विलगाम...। पुरखू कैंप में प्यारे लाल भट्ट आज भी मन ही मन अपने गांव में होते हैं। गांव से होकर बहती कुल्या ...तट पर कीकर के पेड़ के नीचे नन्दिकेश्वर का तीर्थ । गर्भग्रह में पूजित वो शिला जिस पर बछड़े के खुर का चिह्न अंकित है।

विलगाम का बच्चा-बच्चा जानता है कि यह शिला गांव के बुजुर्गों ने स्वयं नन्दिकेश्वर के निर्देश पर कुल्या से खोज निकाली है। प्यारे लाल भट्ट याद करते हैं...रघुभट्ट की पत्नी सरस्वती अक्सर नन्दिकेश्वर के वशीभूत होकर नन्दिमय हो जाती। उसकी आवाज़ में साक्षात् नन्दिकेश्वर बोलते ।

रघुभट्ट का पैतृक गांव सुंबल था और उसके पिता सहजभट्ट नन्दिकेश्वर के परम भक्त थे। उनक ठाकुरद्वारे में भोजन के समय नन्दिकेश्वर प्रतिदिन प्रकट हो जाते। रघुभट्ट का विवाह विलगाम की ही सरस्वती से हुआ था। वहीं बस गये थे । पुलिस की नौकरी थी और ड्यूटी भी विलगाम में ही । इसलिए वह प्रायः सुंबल जाकर नन्दिकेश्वर के दरबार में हाज़िरी नहीं लगा पा रहे थे। इस बात का उन्हें दुःख था। ग्लानि थी।

एक दिन सरस्वती नन्दिकेश्वर के वशीभूत थीं । रघुभट्ट ने उनसे कहा, "मैं सुंबल नहीं जा पाता...."

"मैं विलगाम में रहने आऊंगा..." सरस्वती की आवाज़ में दिव्य आवाज़ थी। अलौकिक स्वर ।

विलगाम की कुल्या के तट पर कुछ बुज़ुर्ग बैठे थे । रघुभट्ट भी था। यह कुछ दिनों के बाद की बात है । उन्हें राजसी ठाठ-बाट में दमक रहा एक पुरुष खेत की सर्पिल पगड्ण्डी से अपनी ओर आता दिखाई दिया। सफेद पगड़ी...सफेद फिरन...दुस्सा...माथे पर तिलक...। वह तेजस्वी पुरुष आकर उनसे कुछ दूर के फासले पर कीकर के तने से पीठ टिकाकर बैठ गया।

सभी बुज़ुर्ग विस्मित थे। यह कौन है, कहां से आया है, यहां किनके यहां जाना है...वे अभी इस तरह के प्रश्न सोच ही रहे थे कि वह खुद के साथ बोला, "इस स्थान पर...यहां बैठूंगा मैं..."

"आप कौन हैं ?"
सभी बुज़ुर्गों को उत्सुकता थी। वे उस अजनबी की ओर देख रहे थे। अरे..अरे. ..रे-रे !!....वे सहसा अचम्भित हुए। उन्हें समझ में नहीं आ रहा था कि वे क्या देख रहे हैं । कीकर के नीचे बैठा वह दिव्य पुरुष हवा में विलीन हुआ जा रहा है...और...और...उनके देखते वहां केवल कीकर था।

उन्हें लगा कि उन सब ने "मैं नन्दिकेश्वर हूं" यह शब्द सुने हैं। लोग दूर-दूर के गांवों में भी विस्मित थे। एक अविश्वसनीय घटना घटित हुई थी। इतने लोगों का सामूहिक अनुभव था।

इसी दौरान सरस्वती एक दिन फिर नन्दिकेश्वर के वशीभूत थीं। रघुभट्ट ने हाथ जोड़कर पूछा, "महाराज, हम कैसे विश्वास करें कि आप वहां हैं?"

नन्दिकेश्वर ने सरस्वती के स्वर में कहा, "कीकर के सामने कुल्या में एक शिला है जिस पर बछड़े के खुर का चिह्न है, उसे निकालकर कीकर के पास रखो....उसे मेरा प्रतीक जानकर वहां तहरी का नैवेद्य रखो...."

कुल्या से प्रतिमा मिली जो आज भी वहां मंदिर में है।

सरस्वती के देहांत के बाद नन्दिकेश्वर भैरव उसकी बेटी की काया में प्रवेश करते। वह स्वामी आनंदजी की बड़ी बहन थी। वशीभूत होने की अवस्था में हाथ में चिलम लेकर बड़े- बड़े कश लेती। चिलम से हवा में लपटें लपलपाती हुई उठतीं। सामान्यतः वह धूम्रपान कभी नहीं करती थीं।

पाकिस्तानी कबाइली हमले के दिन थे। प्यारे लाल भट्ट बताते हैं... "आगामी शुक्रवार को स्थानीय मुसलमानों ने कबाइलियों की शह पर हमारे मुहल्ले में आकर हमें मुसलमान बनाना था। उन्हीं दिनों गांव में श्री सूरजराम के बेटे श्रीमान जी की काया में नन्दिकेश्वर महाराज ने प्रवेश किया। मुहल्ले के सभी भट्टों ने आकर नन्दिकेश्वर महाराज की शरण ली...।"

प्यारेलाल भट्ट आगे बताते हैं कि किस तरह नन्दिकेश्वर भैरव ने उनसे उपाय स्वरूप दूसरे दिन 'राज़कठ' (बकरे की बलि) और तहरी का प्रसाद बनाने को कहा। जब भट्टों ने नन्दिकेश्वर भैरव से सविनय कहा कि वे तो सहर्ष ऐसा करेंगे, परंतु बकरा मारने वाला उन्हें कहां से मिलेगा। पड़ोस के मुस्लमान तो ऐसा करने से रहे। इस पर उन्हें सुनने को मिला कि दूसरी सुबह मुंह अंधेरे ही एक गुज्जर (मुस्लिम) आपके यहां से होकर जाएगा। वह यह काम कर देगा।

दूसरी सुबह गुज्जर आया। उसने विलगाम के भट्टों से हंदवारा जाने का रास्ता पूछा। भट्टों की प्रार्थना पर उसने बकरा मारकर दिया। यथानिर्देश विलगाम के भट्ट 'राज़कठ' करने के बाद कुछ अवधि के लिए सोपोर चले गये।. ..और छह-सात महीने के बाद विलगाम लौट आये।

स्वामी आनंदजी हर वर्ष चैत्र-पूर्णिमा को विलगाम के नन्दिकेश्वर अस्थापन पर हवन करते थे। वह चतुर्दषी को हवन प्रारंभ करते और पूर्णिमा को पूर्णाहुति देते। गांव में उत्सवधर्मी वातावरण बन जाता। एक बार स्वामी आनंदजी जब इसी निमित्त विलगाम पहुंचे तो द्वादशी से ही ज़ोरों की वर्षा शुरू हुई । थमी ही नहीं। साथ में हल्का-हल्का हिमपात भी शुरू हो गया था। लोगों का चलना फिरना भी कठिन हो गया।

मूसलाधार वर्षा दूसरे दिन भी नहीं थमीं । पूरी रात मेघ बरसते रहे। आस पास के गांव से तथा दूर-दराज़ के इलाकों से आये स्वामीजी के अनुयायी उदास थे। चतुर्दशी को स्वामीजी ने अपने शिष्यों से कहा कि वे मंदिर में हवन न कर के इसी घर में करेंगे। वर्षा बराबर हो रही थी।

मंदिर कोई तीन फर्लांग दूर था। रास्ता खेतों से होकर जाता था। सहसा स्वामीजी ने अर्धरात्रि की बेला में देखा कि उनके सामने बैठे टिकालाल की काया में नन्दिकेश्वर ने प्रवेश किया है । टिकालाल विलगाम का ही निवासी था और उस समय स्वामीजी के सानिध्य में बैठा हुआ था।

"हवन मेरे मंदिर में करो!" टिकालाल के स्वर में नन्दिकेश्वर महाराज की आवाज़ थी।

"परंतु महाराज......" स्वामी आनंदजी ने हाथ जोड़कर विनती की, "अब यह कैसे होगा....बाहर वर्षा हो रही है। इस घर से हवन- सामग्री तीन फर्लांग दूर ले जाने में कई दिक्कते हैं ....."

"कहां है वर्षा?"
आनंदजी ने खिड़की खोलकर देखा। तारों से झिलमिलाता आकाश था। वर्षा नदारद ।

हवन की साम्रगी मंदिर पहुंची और हवन यथा-निर्देश शुरू हुआ.।

सन्दर्भ -सूची

हिन्दी -

1. शिव-दर्शन, ओशो रजनीश
2. कल्हण कृत राजतरंगिणि
3. कुलार्णव तंत्र
4. नीलमत-पुराण
5. श्री चामुण्डा नन्दिकेश्वर का इतिहास एवं महात्म्य
6. आर्यों का आदिस्थानः मध्य हिमालय, भजन सिंह'सिंह'
7. श्रेष्ठ कश्मीरी लोकगीत, डॉ. जिया लाल हण्डु
8. काल और कला, दिनकर कौशिक
9. रघुवंश, कालिदास
10. पंचस्तवी
11. विविध प्रसंग (निबंध संग्रह)
12. वाल्मीकि रामायण
13. श्री रूपभवानी रहस्योपदेश, डॉ. त्रिलोकी नाथ गंजू
14. सुमेरु पर्वत कैलास मानसरोवर यात्रा, स्वामी विकास गिरि
15. भवानीनामसहस्र-स्तुति
16. महाभारत

English

1. Bhavaninam Sahasra- Stutih, English Translation and Commentary : Pt. Jankinath Kaul 'Kamal'.
2. The Nilmat Puran Vol. I, A Cultural and Literary Study : Dr. Ved Kumari.
3. The Nilmat Puran Vol. II, Translation: Dr. Ved Kumari.
4. Kalhan's Rajtarangini , Translation : M.A. Stein.
5. Rajtarangini The Saga of the Kings of Kashmir, Translation : Ranjit Sitaram Pandit.
6. Siva Sutras, The Yoga of Supreme Identity: Jaydev Singh
7. Abhinav Gupta : A Historical and Philosophical Study : K.C Pandey

News Papers

1. अमर उजाला (जम्मू-संस्करण)
2. Daily Excelsior (Jammu)

Manuscript :

1. Shri Nandkeshvara of Sumbal (from Man to Divinity)- discourse in Kashmiri by Pt. Niranjan Nath Raina, English rendering Dr. Chaman Lal Kaul.

अग्निशेखर

जन्म : 3 मई 1955, कश्मीर।

शिक्षा : एम.ए पीएच-डी ।

कश्मीर की लोकवार्ता के अंतर्गत कश्मीरी कोसनों, कसमों, चिड़ों, कहावतों, अंधविश्वासों, गालियों पर लेख प्रकाशित व चर्चित ।

कृतियां : 'किसी भी समय' (1992)
'मुझसे छीन ली गई मेरी नदी' (1996)
'कालवृक्ष की छाया में' (2002) ।

सम्पर्क : बी-90/12 भवानीनगर जानीपुर,
जम्मू -180007

फोन : 0191-2530291